बिल्लेसुर बकरिहा

लेखक
सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
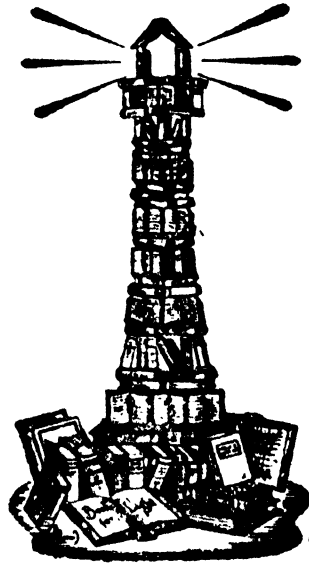
किताब महल
इलाहाबाद

निवेदन

'बिल्लेसुर बकरिहा' प्रगतिशील साहित्य का नमूना है। मित्रों ने इसका बड़ा समादर किया है। बड़ी स्तुति की है। पत्रों में काफ़ी निबन्ध, आलोचनायें इस पर आ चुके हैं। इसका एक संस्करण बहुत जल्द बिक गया। बहिरङ्ग-चित्रण पर ही अङ्ग-चित्रण सूचित है जो प्रगतिशील साहित्य का प्रथम चरण है। कला ऐसी है जैसे तीन छोटी-बड़ी कहानियाँ एक जोड़ के साथ रख दी गई हैं। अन्त समाप्त होकर भी लटका हुआ है जिससे पाठक को एक धक्का-सा लगता है, पर दिल को ताक़त पहुँचती है। पढ़ कर ही विवेचन करें।

दारागंज
१५-४-४५

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

बिल्लेसुर बकरिहा

१

'बिल्लेसुर'—नाम का शुद्ध रूप बड़े पते से मालूम हुआ—'बिल्वेश्वर' है। पुरवा डिवीज़न में, जहाँ का नाम है, लोकमत बिल्लेसुर-शब्द की ओर है। कारण, पुरवा में उक्त नाम के प्रतिष्ठित शिव हैं। अन्यत्र यह नाम न मिलेगा, इसलिए भाषातत्त्व की दृष्टि से गौरवपूर्ण है। 'बकरिहा' जहाँ का शब्द है, वहाँ 'बोकरिहा' कहते हैं। वहाँ 'बकरी' को 'बोकरी' कहते हैं। मैंने इसका हिन्दुस्तानी रूप निकाला है। 'हा' का प्रयोग हनन के अर्थ में नहीं, पालन के अर्थ में है।

बिल्लेसुर जाति के ब्राह्मण, 'तरी' के सुकुल हैं, खेमेवाले के पुत्र खैयाम की तरह किसी बकरीवाले के पुत्र बकरिहा नहीं। लेकिन तरी के सुकुल को संसार पार करने की तरी नहीं मिली तब बकरी पालने का कारोबार किया। गाँववाले उक्त पदवी से अभिहित करने लगे।

हिन्दी-भाषा-साहित्य में रस का अकाल है, पर हिन्दी बोलनेवालों में नहीं; उनके जीवन में रस की गङ्गा-जमुना बहती हैं; बीसवीं-सदी-साहित्य की धारा उनके पुराने जीवन में मिलती है। उदाहरण के लिए अकेला बिल्लेसुर का घराना काफ़ी है। बिल्लेसुर चार भाई आधुनिक साहित्य के चारों चरण पूरे कर देते हैं।

बिल्लेसुर के पिता का नाम मुक्ताप्रसाद था; क्यों इतना शुद्ध नाम था, मालूम नहीं; उनके पिता पण्डित नहीं थे। मुक्ता-प्रसाद के चार लड़के हुये—मन्नी, ललई, बिल्लेसुर, दुलारे। नाम उन्होंने स्वयं रक्खे, पर ये शुद्ध नाम हैं। उनके पुकारने के नाम गुणानुसार और और हैं। मन्नी पैदा होकर साल भर के हुए, पिता ने बच्चे को गर्दन उठाये बैठा झपकता देखा तो 'गपुआ' कहकर पुकारना शुरू किया, आदर में 'गप्पू'। दूसरे लड़के ललई की गोराई रोयों में निखर आई थी, आँखें भी कञ्जलोचन, स्वभाव में बदले-बदले, पिता ने नाम रक्खा 'भर्रा' आदर में 'भूरू'। बिल्लेसुर के नाम में ही गुण था; पिता 'बिलुआ' आदर में 'बिल्लू' कहने लगे। दुलारे अपना ईश्वर के यहाँ से खतना कराकर आये थे, पिता को नामकरण में आसानी हुई, 'कटुआ' कहकर पुकारने लगे, आदर में 'कट्टू'।

अभाग्यवश पुत्रों का विकास देखने से पहले मुक्ताप्रसाद संसार-बन्धन से मुक्त हो गये। उनकी पत्नी देख-रेख करती रहीं। पर वे भी, पीसकर, चौका-टहल कर, कंडे पाथकर, ढोर छोड़कर, रोटी पकाकर, छोटे से बाग़ के आम-महुए बीन कर, लड़कों को किसानी के काम में लगाकर ईश्वर के यहाँ चली गईं। उनके न रहने पर चारों भाइयों की एक राय नहीं रही। विवाद काम में विघ्न पैदा करता है। फलतः चार भाइयों की दो टोलियाँ हुईं। मन्नी और बिल्लेसुर एक तरफ हुए, ललई और दुलारे एक तरफ़, जैसे सनातनधर्मी और आर्य-समाजी। कुछ दिन इसी तरह चला। फिर इनमें भी शाखें फूटीं जैसे वैष्णव और शाक्त, वैदिक और वितण्डावादी। फिर सबकी अपनी डफली और अपना राग रहा।

सनातनधर्मानुसार मन्नी दुखी हुए कि तरी के सुकुल होने के कारण कोई लड़की नहीं ब्याह रहा। पर विवाह आवश्यक है, इस लोक के लिये भी और परलोक के लिये भी। माता-पिता गुज़र गये हैं, पानी तो उन्हें मिल जाता है, पर माता जी को बड़ियाँ नहीं मिलतीं। बिना गृहणी के घर में भूत डेरा डालते हैं। विचार के अनुसार मन्नी बातचीत करते और जहाँ कहीं अनाथ की लड़की देखते थे, डोरे डालते थे।

एक जगह लासा लग गया। कहना न होगा, ऐसे विवाह की बातचीत में अत्युक्ति ही प्रधान होती है, अर्थात् झूठ ही अधिक यानी एक पैसे की हैसियत एक लाख की बताई जाती है। मन्नी के विवाह में ऐसा ही हुआ। लड़की ने माँ का दूध छोड़ा ही था, माँ बेवा थीं, कहा गया, रुपये दो-तीन सौ लेकर क्या करोगी जब कि लड़की को अभी दस साल पालना-पोसना है,—कहीं चलकर रहो, घी-दूध खाओ और रानी की तरह रहकर लड़की की परवरिश करो। बात माँ के दिल में बैठ गई। मन्नी तब तीस साल के थे; पर चूँकि नाटे क़द के थे; इसलिए अट्ठारह-उन्नीस की उम्र बतलाई गई। मूछों की वैसी बला न थी। बात खप गई।

मन्नी के खेतों के पास एक झाड़ी है; कहते हैं, वहाँ देवता झाड़खण्डेश्वर रहते हैं। एक दिन शाम को मन्नी धूप-दीप, अक्षत-चन्दन, फूल-फल जल लेकर गये और उकड़ूँ बैठकर उनकी पूजा करते न जाने क्या-क्या कहते रहे। फिर लौटकर प्रसाद पाकर लेटे और पहर रात रहते पुरवा की तरफ़ चल दिये। एक हफ्ते बाद, बैंगनी साफ़ा बाँधे, एक बेवा और उसकी लड़की को लेकर लौटे। रास्ते में ज़मींदार का खलिहान लगा था, दिखाकर कहा—सब अपनी ही रब्बी है। सासुजी

ने मुश्किल से आनन्दातिरेक को रोका। कुछ बढ़े। गाँव के बाग़ात देख पड़े। मन्नी ने हाथ उठाकर बताया—वहाँ से वहाँ तक सब अपनी ही बागें हैं। सासुजी को सन्देह न रहा कि मन्नी मालदार आदमी है। घर टूटा था। भाइयों से जुदा होकर एक खंडहर में रहे थे; लेकिन वाग्देवी प्रचण्ड थीं, खण्डर को भी खिला दिया। पहुँचने से पहले रास्ते में ज़मींदार की हवेली दिखाकर बोले—हमारा असली मकान यह है, लेकिन यहाँ भाई लोग हैं, आपको एकान्त में ले चलते हैं, वहाँ आराम रहेगा, यहाँ आपकी इज्जत न होगी, फिर उसी को हवेली बना लेंगे। सासु ने श्रद्धापूर्वक कहा—हाँ, भय्या, ठीक है, बाहरी आदमियों में रहना अच्छा नहीं। मन्नी खण्डहर में ले गये। इस दिन पसेरी भर दूध ले आये। सासुजी लज्जित होकर बोलीं—ऐ, इतना दूध कौन पियेगा? मन्नी ने गम्भीरता से उत्तर दिया—औटने पर थोड़ा रह जायगा, तीन आदमी हैं, ज्यादा नहीं; फिर अभी कुछ दूध-चीनी शरबत के तौर पर पियेंगे। सासु ने आराम की साँस ली। मन्नी भङ्ग छानते थे। ठाकुरद्वारे में एक गोला पीसकर तैयार किया और चुपचाप ले आये। दूध में शकर मिलाकर गोला घोल दिया। भङ्ग में बादाम की मात्रा काफ़ी थी, सासुजी को अमृत का स्वाद

आया, एक साँस में पी गई। मन्नी ने थोड़ी-सी अपनी भावी पत्नी को पिलाई, फिर खुद पी। सासुजी हाथ-पैर धोकर बैठीं, मन्नी पूड़ी निकालने लगे। जब तक नशा चढ़े-चढ़े तब तक काम कर लिया। पूड़ी-तरकारी दूध-शकर मिठाई-खटाई बड़ी तत्परता से सासुजी को परोसा। सासुजी को मालूम दिया, मन्नी बड़ी तपस्या के फल मिले। खूब खाया। मन्नी ने पलंग बिछा दिया था, माँ-बेटी लेटीं। मन्नी भोजन करके ईश्वर-स्मरण करने लगे। आधी रात को ज़ोर से गला झाड़ा, पर सासुजी बेख़बर रहीं। फिर दरवाज़े पर हाथ दे-दे मारा, पर उन्होंने करवट भी न ली। मन्नी समझ गये कि सुबह से पहले आँखें न खोलेंगी। बस, अपनी भावी पत्नी को गले लगाया और भगवान् बुद्ध की तरह घर त्यागकर चल दिये। पत्नी गले लगी सोती रही। सुबह होते-होते मन्नी ने सात कोस का फ़ासला तै किया। जहाँ पहुँचे वहाँ रिश्तादारी थी। लोग सध गये। सासुजी ने सबेरे हल्ला मचाया। बात खुली। पर चिड़िया उड़ चुकी थी। वे रो-पीटकर शाप देती हुई कि तू मर जा—तेरी चारपाई गङ्गाजी जाय, घर चली गईं। मन्नी शुभ दिन देखकर चुपचाप विवाह कर पत्नी को साथ लेकर परदेश चले गये। पत्नी की दस-बारह साल सेवा की। अब, धर्म की रक्षा करते हुए, उसे बीस साल की अकेली, उसकी माँ की

गोद में जैसे एक कन्या छोड़कर स्वर्ग सिधार गये हैं। मन्नी कट्टर सनातनधर्मी थे।

ललई का दूसरा हाल है। पहले ये भी कलकत्ता बम्बई की खाक छानते फिरे, अन्त में रतलाम में आकर डेरा जमाया। यहाँ एक आदमी से दोस्ती हो गई। कहते हैं, ये गुजराती ब्राह्मण थे। ईश्वर की इच्छा, कुछ दिनों में दोस्त ने सदा के लिये आँखें मूँदीं। लाचार, दोस्त के घर का कुल भार ललई ने उठाया। दोस्त का एक परिवार था। पत्नी, दो बेटे, बड़े बेटे की स्त्री। इन सबसे ललई का वही रिश्ता हुआ जो इनके दोस्त का था। इस परिवार में कुछ माल भी था, इसलिये ललई ने परदेश रहने से देश रहना आवश्यक समझा। चूँकि अपने धर्म-कर्म में दृढ़ थे इसलिये लोकनिन्दा और यशःकथा को एकसा समझते थे। अस्तु इन सबको गाँव ले आये। एक साथ पत्नी, दो-दो पुत्र और पुत्रवधू को देखकर लोग एकटक रह गये। इतना बड़ा चमत्कार उन्होंने कभी नहीं देखा था। कहीं सुना भी नहीं था। गाँववालों की दृष्टि ललई पहले ही समझ चुके थे, जानते थे, जिस पर पड़ती है, उसका जल्द निस्तार नहीं होता, इसलिये निस्तार की आशा छोड़कर ही आये थे। गाँव-वालों ने ललई का पान-पानी बन्द किया। ललई ने सोचा, एक खर्च बचा। गाँववाले भी समझे, इसने बेवकूफ़ बनाया, माल

ले आया है जिसका कुछ भी ख़र्च न कराया गया। ललई निर्विकार चित्त से अपने रास्ते आते-जाते रहे। मौक़े की ताक में थे। इसी समय आन्दोलन चला। ललई देश के उद्धार में लगे। बड़ा लड़का गुजरात में कहीं नौकर था, ख़र्चा भेजता रहा। गाँववाले प्रभाव में आ गये। ललई की लाली के आगे उनका असहयोग न टिका। अब मिलने की बातें कर रहे हैं। ललई राजनीतिक सुधारक सामाजिक आदमी हैं।

बिल्लेसुर का हाल आगे लिखा जायगा। इनमें बिल और ईश्वर दोनों के भाव साथ साथ रहे।

दुलारे आर्यसमाजी थे। बस्तीदीन सुकुल पचास साल की उम्र में एक बेवा ले आये थे। लाने के साल ही भर में उनकी मृत्यु हो गई। दुलारे ने उस बेवा को समझाया, पति के रहते भी तीन साल या तीन महीने खबर न लेने पर पत्नी को दूसरा पति चुनने का अधिकार है। फिर जब बस्तीदीन नहीं रहे तब तीसरे पति के निर्वाचन की उन्हें पूरी स्वतन्त्रता है, और दुलारे उनकी सब तरह सेवा करने को तैयार हैं। स्त्री को एक अवलम्ब चाहिये। वह राज़ी हो गई। लेकिन दुलारे भी साल भर के अन्दर संसार छोड़कर परलोक सिधार गये। पत्नी को हमल रह गया था, बच्चा हुआ। अब वह नारद की तरह ललई के दरवाज़े बैठा खेला करता है। माँ नहीं रही।

मन्त्री मार्ग दिखा गये थे, बिल्लेसुर पीछे-पीछे चले। गाँव में सुना था, बङ्गाल का पैसा टिकता है, बम्बई का नहीं, इसलिये बङ्गाल की तरफ़ देखा। पास के गाँवों के कुछ लोग बर्दवान के महाराज के यहाँ थे सिपाही, अर्दली, जमादार। बिल्लेसुर ने साँस रोककर निश्चय किया, बर्दवान चलेंगे। लेकिन ख़र्च न था। पर प्रगतिशील को कौन रोकता है? यद्यपि उस समय बोल्शेविज्म का कुछ ही लोगों ने नाम सुना था, बिल्लेसुर को आज भी नहीं मालूम, फिर भी आइडिया अपने आप बिल्लेसुर के मस्तिष्क में आ गई। वे उसी फटे हाल कानपुर गये। बिना टिकट कटाये कलकत्ते वाली गाड़ी पर बैठ गये। इलाहाबाद पहुँचते-पहुँचते चेकर ने कान पकड़ कर गाड़ी से उतार दिया। बिल्लेसुर हिन्दुस्तान के जलवायु के अनुसार सविनय क़ानून-भङ्ग कर रहे थे, कुछ बोले नहीं, चुपचाप उतर आये; लेकिन सिद्धान्त नहीं छोड़ा।

प्लैटफ़ार्म पर चलते-फिरते समझते-बूझते रहे। जब पूरब जाने-वाली दूसरी गाड़ी आई, बैठ गये। मोगलसराय तक फिर उतारे गये; लेकिन, दो-तीन दिन में, चढ़ते-उतरते, बर्दवान पहुँच गये।

पं० सत्तीदीन सुकुल, महाराज, बर्दवान के, यहाँ जमादार थे। यद्यपि बङ्गालियों को 'सत्तीदीन' शब्द के उच्चारण में अड़चन थी, वे 'सत्यदीन' या 'सतीदीन' कहते थे, फिर भी 'सत्तीदीन' की उन्नति में वे कोई बाधा नहीं पहुँचा सके। अपनी अपार मूर्खता के कारण सत्तीदीन महाराज के ख़ज़ाञ्ची हो गये, आधे; आधे इसलिये कि ताली सत्तीदीन के पास रहती थी, खाता एक दूसरे बाबू लिखते थे। सत्तीदीन इसे अपने एकान्त विश्वासी होने का कारण समझते थे। दूसरे हिन्दोस्तानियों पर भी इस मर्यादा का प्रभाव पड़ा। बिल्लेसुर समझ-बूझकर इनकी शरण में गये। सत्तीदीन सस्त्रीक रहते थे। दो-तीन गायें पाल रक्खी थीं। स्त्री 'शिखरिदशना' थीं यानी सामने के दो दाँत आवश्यकता से अधिक बड़े थे। होठों से कोशिश करने पर भी न बन्द होते थे। पैकू के सुकुल। कनवजियापन में बिल्लेसुर से बहुत बड़े। फलतः बिल्लेसुर को यहाँ सब तरह अपनी रक्षा देख पड़ी।

बिल्लेसुर सत्तीदीन के यहाँ रहने लगे। ऐसी हालत में ग़रीब की तहज़ीब जैसी, दबे पाँव, पेट खलाये, रीढ़ झुकाये, आँखें नीची किये आते-जाते रहे। उठते जोबन में सत्तीदीन की स्त्री को एक सुहलानेवाला मिला। दो-तीन दिन तक भोजन न खला। एक दिन औरतवाले कोठे जी गया। नक्की सुरों में बोलीं, "मैं कहती हूँ, बिल्लेसुर, तुम तो आ ही गये हो, और अभी हो ही, इस चरवाहे को बिदा क्यों न कर दूँ? हराम का पैसा खाता है। कोई काम है? घास खड़ी है, दो बोझ काट लानी है; नहीं, पैरे की बँधी मूठें हैं—यहाँ वहाँ का जैसा धान का पैरा नहीं—बड़ा-बड़ा कतर देना है और थोड़ी-सी सानी कर देनी है; देश में जैसे डंडा लिए यहाँ ढोरों के पीछे नहीं पड़ा रहना पड़ता, लम्बी-लम्बी रस्सियाँ हैं, तीन गायें हैं, घास खड़ी है, बस ले गये और खूँटा गाड़कर बाँध दिया, गायें चरती रहीं, शाम को बाबू की तरह टहलते हुए गये और ले आये, दूध दुह लिया रात को मच्छड़ लगते हैं, गीले पैरे का धुवाँ दे दिया; कहने में तो देर भी लगी।" कहकर सत्तीदीन की स्त्री ने कनपटी घुमाई और दोनों होंठ सटाने शुरू किये।

बिल्लेसुर चौकन्ने। ढोर चराने के लिए समन्दर पार नहीं किया। यह काम गाँव में भी था। लेकिन परदेश है। अपना

कोई नहीं। दूसरे के सहारे पार लगना है। सोचा, तब तक कर लें; नौकरी न लगी तो घर का रास्ता नापेंगे।

बिल्लेसुर को जवाब देते देर हुई। सत्तीदीन की स्त्री ने कनपटी घुमाई कि बिल्लेसुर बोले—'कौन बड़ा काम है? काम के लिए ही तो आया हूँ सात सौ कोस—देस सात सौ कोस तो होगा?'

बिल्लेसुर के निश्चय पर जमकर सत्तीदीन की स्त्री ने कहा, 'ज्यादा होगा।' कानपुर से बर्दवान की दूरी। सोचकर बोली, 'जमादार आयेंगे तो पूछूँगी, उनकी किताब में सब लिखा है।'

बिल्लेसुर खामोश रहे। मन में क़िस्मत को भला-बुरा कहते रहे।

शाम को जमादार आये। भोजन तैयार था। स्त्री ने पैर धुला दिये। जमादार पाटे पर बैठे। स्त्री दिन को मक्खियाँ उड़ाती हैं, रात को सामने बैठी रहती हैं। जमादार भोजन करने लगे। स्त्री ने कहा 'जमादार', बिल्लेसुर कहते हैं, अपना देस यहाँ से सात सौ कोस है, मैं कहती हूँ, और होगा। तुम्हारी किताब में तो सब कुछ लिखा है?"

सत्तीदीन को एक डाइरी मिली थी। डायरी भी वही बाबू लिखता था। लिखने के विषय के अलावा और क्या-क्या उसमें लिखा है, सत्तीदीन उस बाबू से कभी-कभी पढ़ाकर समझते थे। सत्तीदीन ने सोचा, महाराज ने ऊँचा पद तो दिया ही है, संसार को भी उनकी मुट्ठी में बेर की तरह डाल दिया है। कई रोज़ वह किताब घर ले आये थे, और वहाँ जो कुछ सुना था, जितना याद था, ज़बानी स्त्री को सुनाया था।

बायें हाथ से मूछों पर ताव देते हुए, मुँह का नेवाला निगल कर सत्तीदीन ने कहा, 'सात सौ कोस इलाहाबाद तक पूरा हो जाता है।' उनकी स्त्री चमकती आँखों से बिल्लेसुर को देखाने लगीं। बिल्लेसुर हार मानकर बोले,—'जब किताब में लिखा है तो यही ठीक होगा।'

पति को प्रसन्न देखकर पत्नी ने अर्ज़ी पेश की जिस तरह पहले बड़े आदमियों का मिज़ाज परखा जाता था, फिर बात कही जाती थी। बिल्लेसुर ग़र्ज़मन्द की बावली निगाह से देखते रहे। सत्तीदीन ने उसमें एक सुधार की जगह निकाली, कहा 'बिल्लेशुर अपने आदमी हैं इसमें शक नहीं, लेकिन इसमें भी शक नहीं कि उस छोकड़े से ज्यादा खायेंगे। हम तनख्वाह

न देंगे। दोनों वक्त खा लें। तनख्वाह की जगह हम तहसील के जमादार से कह देंगे, वे इन्हें गुमाश्तों के नाम तहसील की चिट्ठियाँ देते रहें, ये चार-पाँच घण्टे में लगा आयेंगे, इन्हें चार-पाँच रुपये महीने मिल जाया करेंगे, हमारा काम भी करते रहेंगे।'

सत्तीदीन की स्त्री ने किये उपकार की निगाह से बिल्लेसुर को देखा। बिल्लेसुर ख़ूराक और चार-पाँच का महीना सोचकर अपने धनत्व को दबा रहे थे, इतने से आगे बहुत कुछ करेंगे। सोचते हुए उन्होंने सत्तीदीन की स्त्री से हामी की आँख मिलाई।

जमादार गम्भीर भाव से उठकर हाथ-मुँह धोने लगे।

बिल्लेसुर जीवन-संग्राम में उतरे। पहले गायों के काम की बहुत-सी बातें न कही गई थीं, वे सामने आईं। गोबर उठाना, जगह साफ़ करना, मूत पर राख छोड़ना, कंडे पाथना, कभी-कभी गायों को नहलाना आदि भीतरी बहुत-सी बातें थीं। दरअस्ल फ़ुर्सत न मिलती थी। पर बिना चिट्ठी लगाये पूरा न पड़ता था। पास-पास की चिट्ठियाँ मिलती थीं, जैसा सत्तीदीन कह गये थे। एक चिट्ठी के तीन आने मिलते थे। कुछ दिनों में बिल्लेसुर को मालूम हुआ, दूर की चिट्ठी में दूना मिलता है। उन्होंने हाथ बढ़ाया। तहसील के जमादार ने कहा, न तुम नौकर हो, न किसी की एवज़ पर हो, फिर सत्तीदीन ने मना किया है, दूर की चिट्ठी हम न देंगे। बिल्लेसुर पैरों पड़े, कहा, नौकर तो आप ही करेंगे, तबतक दूरवाली चिट्ठी भी दें, मैं

बारह कोस छः घण्टे में जाऊँगा-आऊँगा। जमादार चिट्ठी देने लगे।

चिट्ठी लगाना सत्तीदीन की स्त्री को अखरता था। बिल्लेसुर लौटकर सदा चढ़ी त्योरियाँ देखते थे। गोकि काम में कसर न रहती थी। दस बजे तक कुल काम कर जाते थे। लौटकर गायों को खोल लाते थे और रात नौ बजे तक उनके पीछे लगे रहते थे। फिर भी सत्तीदीन की स्त्री की शिकन न मिटती थी। दूसरा नौकर भी न रक्खा, क्योंकि बिल्लेसुर सस्ते थे। बातें कभी-कभी सुनाती थीं जो कानों को प्यारी न थीं, और उनसे पेट की आँतें निकलने को होती थीं। बिल्लेसुर बरदाश्त करते थे। गरमी के दिनों में दस-बारह बजे तक घर का कुछ काम करते थे, फिर चिट्ठी लगाते हुए, देर हुई सोचकर धूप में, नंगे सिर, बिना छाता, दौड़ते हुए रास्ता पार करते थे। लौटते थे, हाँफते हुए, मुँह का थूक सूखा हुआ, होंठ सिमटे हुए, पसीने-पसीने, दिल धड़कता हुआ, यहाँ का बाक़ी काम करने के लिये। पहुँचकर ज़मीन पर ज़रा बैठते थे कि सत्तीदीन की स्त्री पूछती थीं, कितना कमा लाये बिल्लेसुर? ज़बान छुरी से पैनी, मतलब हलाल करता हुआ। बिल्लेसुर उस गरमी में बनावटी नरमी लाते

हुए, खीस निपोड़कर जवाब देते हुए, ज़रा सुस्ताकर गायों के पीछे तरह-तरह के काम में दौड़ते हुए।

उन दिनों कइयों से बिल्लेसुर कह चुके, मर्द से औरत होना अच्छा। कोई नहीं समझा। बिल्लेसुर सूखे होठों की हार खाई हँसी हँसकर रह गये।

गाँव में भी बिल्लेसुर की बरदाश्त करने की आदत पड़ी थी। कभी कुछ बोले नहीं। अपनी ज़िन्दगी की किताब पढ़ते गये। किसी भी वैज्ञानिक से बढ़कर नास्तिक।

बिल्लेसुर दूसरे का अविश्वास करते-करते एक ख़ास शक्ल के बन गये थे। पर अपना बल न छोड़ा था, जैसे अकेले तैराक हों। सत्तीदीन की स्त्री को न मालूम होने दिया कि दूर की कौड़ी लाते हैं। बारह कोस की दौड़ छः कोस की रही। दुनिया को ख़ुश करने की नस टोये पा चुके थे; दम साधे, दबाते हुए कई महीने खे गये। एक दिन जमादार को ख़ुश देखकर बोले, 'बाबा, अब नौकरी लगा देते !'

उन्होंने कहा, 'अच्छा, कल नाप देना।'

बिल्लेसुर मझी के भाई थे, पाँच फ़ीट से कुछ ही ऊपर। जानते थे, ऊँचाई घटेगी। तरकीब निकाली। चमरौधा जूता

था डेढ़ इञ्च से कुछ ज़्यादा ऊँचे तले का। उसमें रुई की गद्दी लगाई। पहनकर खड़े हुए तो जैसे ईंटों पर खड़े हों। लेकिन झेंपे नहीं, न डरे, जैसे फ़र्ज अदा कर रहे हों, गये। कचहरी में लट्ठ लाकर लगाया गया। बिल्लेसुर ने आँख उठाई कि देखें, पूरे हो गये। नापनेवाले ने कहा, डेढ़ इञ्च घटा।

बिल्लेसुर ने जमादार को उड़ी निगाह से देखा। साथ आरजू-मिन्नत। जमादार मुस्कराये। कहा, 'बिल्लेसुर, तुम नौकर नहीं हो सकते, लेकिन कोई-न-कोई सिपाही छुट्टी पर रहता है, जगह तुम्हें मिलती रहेगी, बिना तनख्वाह की छुट्टीवाले की तनख्वाह भी।'

बिल्लेसुर तरक़्क़ी की सोचकर मुस्कराये।

एक साल बीत गया।

सत्तीदीन की स्त्री को आये कई साल हो गये, उन्होंने जगन्नाथजी के दर्शन नहीं किये। पैसा पास था। एक दिन जमादार से बोलीं, 'जमादार, पैसा तो पास है, लेकिन लड़का बच्चा कोई नहीं। हमारे-तुम्हारे बाद पैसा अकारथ जायगा। इतने दिन आये हुए, अभी जगन्नाथजी के दर्शन नहीं हुए। अबके सोचती हूँ, बाबा के दर्शन करूँ और कहूँ, बाबा मेरी गोद भर दो तो तुम्हारे चरणों पर लोटकर तुम्हारी एक सौ एक रुपये की शिरनी चढ़ाऊँ। मेरा जी कहता है, बाबा मेरी मनोकामना पूरी करेंगे। देश-देश के लोग जाते हैं, मुँहमाँगा वरदान उन्हें मिलता है, भगवान् ही हैं—अरे हाँ—जो कर, थोड़ा। फिर न जाने क्या सोचकर सत्तीदीन की स्त्री फूट-फूट-कर रोने लगीं, फिर अपने हाथ आँसू पोंछकर हिचकियाँ लेती हुई बोलीं, 'मुझे सब सुख है। जैसा अच्छा वर मिला, वैसा

अच्छा घर; धन है, मान है, गहने हैं, कपड़े हैं, दूध से भरी हूँ, लेकिन ऊँ हूँ हूँ—' फिर रोदन, यानी पूत नहीं।

सत्तीदीन ने छाती से लगाकर कहा, 'अभी तुम्हारी कोई उमर हो गई है ? पहली होतीं तो एक बात होती। वे तो बेचारी चक्की पीसती हुई चली गईं। पाँच साल हुए तुम्हें ब्याह कर लाया हूँ। अब तुम्हारी उम्र बीस साल की होगी ?'

सिसकियाँ लेते हुए स्त्री ने कहा, 'उन्नीसवाँ चल रहा है।' हालाँ कि उनकी उम्र पच्चीस साल से ऊपर थी।

'फिर ?' सत्तीदीन ने कहा, 'इतनी उतावली क्यों होती हो ? मैं भी अभी बुड्ढा नहीं। लड़के-बच्चे जब आते हैं, अपने आप आते हैं।

'ऐसा न कहो', स्त्री ने कहा, 'कहो, जगन्नाथ जी की कृपा से आते हैं।'

सत्तीदीन गम्भीर हो गये, बोले 'जगन्नाथजी की कृपा सब तरफ़ है। ऊँचा ओहदा मिला है, यह भी जगन्नाथजी की कृपा है; और उनके दर्शन हम रोज़ करते हैं मन में, रही बात उनकी पुरी में जाने की, सो चले चलेंगे, दस दिन की छुट्टी ले लेंगे। यह कौन बड़ी बात है ?

स्त्री को ढाढस बँधा। इसी समय बिल्लेसुर आये। जमादार ने पूछा, 'बिल्लेसुर, जगन्नाथ जी चलोगे ?'

बिल्लेसुर ख़रचा नहीं लगाना चाहते थे। सत्तीदीन समझ गये। लेकिन बिल्लेसुर के पास होगा भी कितना, सोचकर कहा, 'अच्छा, अपनी छुट्टी मंजूर करा लेना दस दिन की, अगले इतवार को चलेंगे।' सत्तीदीन को साथ एक नौकर चाहिये था।

बिल्लेसुर जब दूसरे की एवज़ में काम करने लगे, तब कचहरी की लगातार हाज़िरी ज़रूरी हो गई। सत्तीदीन को गायों के काम के लिये दूसरा नौकर रखना पड़ा। बाहर का बहुत-सा काम बिल्लेसुर कर देते थे, यों वे अब अलग रहते थे, अलग पकाते खाते थे।

फोकट में जगन्नाथजी के दर्शन होंगे, बिल्लेसुर के आनन्द का आरपार न रहा। उन्होंने छुट्टी मंजूर करा ली। अगले इतवार के दिन सत्तीदीन के सामान के रक्षक के रूप से जगन्नाथजी के दर्शनों के लिये सत्तीदीन और उनकी स्त्री के साथ रवाना हुए।

जिस तरह सत्तीदीन की स्त्री का विश्वास था कि जगन्नाथ-जी की कृपा की दृष्टि पड़ते ही वे गर्भिणी हो जायँगी, उसी तरह बिल्लेसुर का विश्वास था कि सत्तीदीन की इच्छामात्र से उनकी नौकरी स्थायी हो जायगी, चाहे वे डेढ़ इञ्च की जगह बालिश्त भर छोटे पड़ें।

अपने विश्वास को फलीभूत करने का उपाय बिल्लेसुर रास्ते

में सोचते गये।

पुरी पहुँचकर बहुत खुश हुए। ऐसा दृश्य कानपुर से बर्दवान तक न देखा था। समन्दर का किनारा—बालू के ढूह—देखकर बहुत खुश हुए, समुद्र देखकर जामे से बाहर हो गये। जगन्नाथ-जी की स्मृति में बहुत से घोंघे समुद्र के किनारे से चुनकर रख लिये, कुछ छोटे-छोटे शङ्ख-से।

मार्कण्डेय, वटकृष्ण, चन्दनतालाब आदि प्रसिद्ध जगहें देखते फिरे। मन्दिर के अहाते में और छोटे-छोटे मन्दिर हैं। एक-एक देखते फिरे। एकादशी को एक जगह उल्टा टंगी देख-कर हँसे। सत्तीदीन ने कहा 'बाबा के प्रताप से यहाँ एकादशी उल्टा टाँग दी गई हैं; यहाँ कोई एकादशी का व्रत नहीं कर सकता। बिल्लेसुर ने उन्हें भी हाथ जोड़कर प्रणाम किया। फिर सब लोग कलियुग की मूर्त्ति देखने गये। कलियुग अपनी बीबी को कन्धे पर बैठाये बाप को पैदल चला रहा है। सत्तीदीन की स्त्री ग़ौर से देखती रहीं। कई रोज़ बड़े आनन्द से कटे। भुव-नेश्वर चलने की तैयारी हुई।

जगन्नाथजी में जूठा नहीं होता, या दूसरे की जूठन खाना प्रचलित है। इधर के लोग जिन्हें चौके की क़ैद माननी पड़ती है, वहाँ खुलकर एक़ दूसरे की जूठन खाते हैं। कोई बुरा नहीं मानता। बिल्लेसुर ने जमादार और जमादारिन की पत्तलों में

अपने जूठे हाथ से भात उठाकर डाल दिया। वे कुछ न बोले, बल्कि खाते हुए हँसते रहे।

दो दिन बीत जाने पर की बात है, जमादार नहा चुके थे, बिल्लेसुर भी नहाकर आये। आकर सीधे जमादार के पास गये और उनके पैर पकड़ कर पेट के बल लेट गये। 'क्या है बिल्लेसुर ?—क्या है बिल्लेसुर ?' जमादार शङ्का की दृष्टि से देखते हुए पूछने लगे। बिल्लेसुर ने करुण स्वर से कहा, 'कुछ नहीं, बाबा, मेरा भवसागर से उद्धार करो।'

'भवसागर से उद्धार हम कैसे करें, बिल्लेसुर ? क्या हो गया है ?' सत्तीदीन विचलित हो गये।

पैर पकड़े हुए ही बिल्लेसुर ने कहा, 'बाबा, मुझे गुरुमन्त्र दो !'

'अरे, गुरु यहाँ एक-से-एक बड़े हैं, छोड़ो पाँव, उनमें जिससे चाहो, मन्त्र ले लो।' सत्तीदीन ने पैर छुड़ाने को किया।

'मेरी निगाह में तुमसे बड़ा कोई नहीं। तुम मुझ पर दया करो।' पैर पकड़े हुए बिल्लेसुर ने पैरों पर माथा रख दिया।

'मुझे तो कोई गुरुमन्त्र आता ही नहीं। सिर्फ़ गायत्री आती है।' विकल होकर सत्तीदीन ने कहा।

'बाबा, गायत्री से बड़ा गुरुमन्त्र और कोई नहीं। मैं यही मन्त्र लूँगा।'

'अरे, गायत्री तो जनेऊ होते वक्त तुम सुन चुके हो।'

'मैं भूल गया हूँ। तुम्हारे पैर छूकर कहता हूँ। कल मैंने सपना देखा है कि बाबा जगन्नाथ जी कहते हैं........लेकिन कहूँगा तो सपना फलियायगा नहीं।'

स्वप्न की बात से सत्तीदीन की स्त्री रोमाञ्चित हुईं। बिल्लेसुर बाज़ी मार ले गया, सोचा। पुकार कर कहा, 'बिल्लेसुर, पैर छोड़ दो। तुम्हें बाबा का सपना हुआ है, तो मैं कहती हूँ, जमादार गुरुमन्त्र देंगे। यहाँ आओ, अकेले में मुझसे बताओ कि क्या सपना देखा।'

बात पाकर बिल्लेसुर ने पैर छोड़ दिये। सत्तीदीन की स्त्री कोठरी की तरफ़ बढ़ी। बिल्लेसुर साथ-साथ गये। वहाँ जाकर कहा, 'मैं सोता था, सोता था, देखा भुस्स से एक आग जल उठी, उसमें तीन मुँह वाला एक आदमी बैठा था, उसने कहा, बिल्लेसुर, तू ग़रीब ब्राह्मण है, सताया हुआ है, लेकिन घबड़ा मत, तू जिसके साथ आया है, उनकी सेवा कर, उनसे यहीं गुरुमन्त्र ले ले, तू दूधों-पूतों फलेगा। फिर देखता हूँ तो कहीं कुछ नहीं।'

सत्तीदीन की स्त्री ने निश्चय किया, फल उल्टा हुआ। यह सपना दरअस्ल उन्हें होना था। कोई ख़ता न हो गई हो। हर सोमवार बाबा के नाम घी की बत्ती देने का सङ्कल्प किया।

फिर सत्तीदीन से मन्त्र दे देने के लिये कहा। सत्तीदीन ने कण्ठी, माला, मिठाई, अँगोछा आदि बाज़ार से ख़रीद लाने के लिये बिल्लेसुर से कहा। बिल्लेसुर गये, क्षण भर में ख़रीद लाये। सत्तीदीन ने गायत्री मन्त्र से पुनर्वार बिल्लेसुर को दीक्षित किया।

बिल्लेसुर की श्रद्धालु आँखों का प्रभाव सत्तीदीन की स्त्री पर पड़ा। जगन्नाथ-दर्शन बिल्लेसुर के मुकाबिले उनका फीका रहा सोचकर जमादार से बोलीं, 'जमादार, मैं कहती हूँ, मन्त्र मैं भी क्यों न ले लूँ।' जमादार ने कहा, 'अच्छा, पण्डाजी आवें, तो पूछ लें।' ईश्वर की इच्छा से पण्डाजी कुछ ही देर में आ गये। सत्तीदीन ने पूछा। पण्डाजी ने सत्तीदीन की स्त्री को देखा और कहा, 'अभी तुम रख नहीं सकेगा। अभी तो तुमको मासिक धर्म होता है।'

सत्तीदीन की स्त्री कटी निगाह देखती रही। पण्डाजी ने सत्तीदीन को सलाह दी कि चौथेपन में गुरुमन्त्र लेना लाभ-दायक होता है। जब तक स्त्री को मासिक धर्म होता है तब तक वह मन्त्र की रक्षा नहीं कर सकती, अशुद्ध रहती है और तरह-तरह से पैर फिसलने की सम्भावना है। सत्तीदीन मान गये।

वहाँ से भुवनेश्वर गये, फिर बर्दवान वापस आये।

५

सत्तीदीन की स्त्री एक साल तक जगन्नाथ जी की शक्ति की परीक्षा करती रहीं। हर सोमवार को घी का दिया देती थीं; और हर महीने के अन्त तक प्रतीक्षा करती थीं। लेकिन कोई फल न हुआ।

बिल्लेसुर की क्रिया-काष्ठा बहुत बढ़ गई। तिलक, माला और गायत्री के धारण से उनकी प्रखरता दिन पर दिन निखरती गई।

जब एक साल तक पुत्र-विषय में बाबा जगन्नाथजी ने कृपा न की तब सत्तीदीन की स्त्री का देवता पर कोप चढ़ा और वे दिव्य शक्ति को छोड़कर मनुष्य-शक्ति की पक्षपातिनी बन गई; यथार्थवादी लेखक की तरह।

बिल्लेसुर को बड़ी ग्लानि हुई। उनके गुरुमन्त्र का लोग मज़ाक उड़ाते थे। उनकी हालत में भी कोई सुधार नहीं हुआ।

उन्होंने निश्चय किया, देश चलकर रहेंगे, ज़मींदार की ग़ुलामी से गुरु की ग़ुलामी सख़्त है, यहाँ से वहाँ की आबो-हवा अच्छी, अपने आदमी बोलने-बतलाने के लिये हैं, अब यहाँ नहीं रहेंगे।

गुरुआइन का यथार्थवाद भी बिल्लेसुर को खला। एक दिन वे अपनी कण्ठी और माला लेकर गये और गुरुआइन के सामने रखकर कहा, "मैंने देश जाने की छुट्टी ली है। लौटूँ या न लौटूँ, कहने को क्यों रहे, यह माला है और यह कंठी, लो, अब मैं चेला नहीं रहूँगा, जैसे गुरु वैसे तुम, यह तुम्हारा मन्त्र है!"

कहकर गायत्री-मन्त्र की आवृत्ति कर गये और सुनाकर चल दिये, फिर पैर भी नहीं छुए।

बिल्लेसुर गाँव आये। अंटी में रुपये थे, होठों में मुसकान। गाँव के ज़मींदार, महाजन, पड़ोसी, सब की निगाह पर चढ़ गये—सबके अन्दाज़ लड़ने लगे—'कितना रुपया ले आया है।' लोगों के मन की मन्दाकिनी में अव्यक्त ध्वनि थी—बिल्लेसुर रुपयों से हाथ धोयें! रात को लाठी के सहारे कच्चे मकान की छत पर चढ़कर, आँगन में उतरकर, रक्खा सामान और कपड़े-लत्ते उठा ले जानेवाले चोर ताक में रहने लगे कि मौक़ा मिले तो हाथ मारें। एक दिन मन्सूबा गाँठकर त्रिलोचन मिले और अपनी ज्ञानवाली आँख खोलकर बड़े अपनाव से बिल्लेसुर से बातचीत करने लगे—"क्यों बिल्लेसुर, अब गाँव में रहने का इरादा है या फिर चले जाओगे?"

बिल्लेसुर त्रिलोचन के पिता तक का इतिहास कण्ठाग्र किये थे, सिर्फ़ हिन्दी के ब्लैंक वर्स के श्रेष्ठ कवि की तरह

किसी सम्मेलन या घर की बैठक में आवृत्ति करके सुनाते न थे। मुस्कराते हुये नरमी से बोले—"भय्या, अब तो गाँव में रहने का इरादा है—बंगाल का पानी बड़ा लागन है।"

त्रिलोचन के तीसरे नेत्र में और चमक आ गई। एक क़दम बढ़कर और निकट होते हुए, समीप्यवाले भक्त के सहानुभूतिसूचक स्वर से बोले—"बड़ा अच्छा है, बड़ा अच्छा है। काम कौन-सा करोगे?"

"अभी तक कुछ विचार नहीं किया।" बिल्लेसुर वैसे ही मुस्कराते हुए बोले।

"बिना सोते के कुआ सूख जाता है। बैठे-बैठे कितने दिन खाओगे?"

"सही-सही कहता हूँ। अभी तो ऐसे ही दिन कटते हैं।"

"ऐसा न कहना। गाँव के लोग बड़े पाजी हैं। पुलिस में रिपोट कर देंगे तो बदमाशी में नाम लिख जायगा। कहा करो, जब चुक जायगा तब फिर कमा लायेंगे।"

बिल्लेसुर सिटपिटाये। कहा, "हाँ भय्या, आजकल होम करते हाथ जलता है। लोग समझेंगे, जब कुछ है ही नहीं तब खाता क्या है?—चोरी करता होगा।"

त्रिलोचन ने सोचा, परले दरजे का चालाक है, कहीं कुछ

खोलता ही नहीं। खुलकर बोले, "हाँ, दीनानाथ इसी तरह बहुत खीस निपोड़कर बातचीत किया करते थे, अब लिख गये बदमाशी में; रात को निगरानी हुआ करती है।"

बिल्लेसुर फिर भी पकड़ में न आये। कहा, "पुलिसवाले आँखें देखकर पहचान लेते हैं—कौन भला आदमी है, कौन बुरा। अपने खेत मैं रामदीन को बँटाई में देकर गया था। वही खेत लेकर किसानी करूँगा।"

त्रिलोचन को थोड़ी-सी पकड़ मिली। कहा, "हाँ, यह तो अच्छा विचार है। लेकिन तुम्हारे बैल तो हैं ही नहीं, किसानी कैसे करोगे?"

बिल्लेसुर पेच में पड़े। कहा, "इसीलिये तो कहा था कि अभी तक कुछ तै नहीं कर पाया।"

त्रिलोचन का पारा चढ़ना ही चाहता था, लेकिन पारा चढ़ने से खरी-खोटी सुनकर अलग हो जाने के अलावा और कोई स्वार्थ न सधेगा, सोचकर मुश्किल से उन्होंने अपने को यथार्थ कहने से रोका, और बड़े धैर्य से कहा, "हमारे बैल लें लो।"

"फिर तुम क्या करोगे?"

"हम और बड़ी गोई लेना चाहते हैं। लेकिन सौ रुपये लेंगे।"

बिल्लेसुर ने निश्चय किया, सौ रुपये ज्यादा नहीं हैं।

कहा, "अच्छा, कल बतलायेंगे।"

त्रिलोचन, एक काम है, कहकर चले। मन में निश्चय हो गया कि सौ रुपये एकमुश्त देने वाले बिल्लेसुर के पास पाँच-सात सौ रुपये ज़रूर होंगे। त्रिलोचन दूसरी जगह सलाह करने गये कि किस उपाय से वे रुपये निकालेज ायँ।

बिल्लेसुर त्रिलोचन के जाने के साथ घर के भीतर गये और कुछ देर में तैयार होकर बाहर के लिये निकले। लोगों ने पूछा, कहाँ जाते हो बिल्लेसुर ? बिल्लेसुर ने कहा, पटवारी के यहाँ।

शाम होते-होते लोगों ने देखा, तीन बड़ी-बड़ी गाभिन बकरियाँ लिये बिल्लेसुर एक आदमी के साथ आ रहे हैं। गाँव भर में हल्ला हो गया, बिल्लेसुर तीन बकरियाँ ले आये हैं। सबने एक-एक लम्बी साँस छोड़ी।

बकरियों का समाचार पाकर त्रिलोचन फिर आये। कहा, बकरी ले आये, अच्छा किया, अब ढोर काफ़ी हो जायेंगे। बिल्लेसुर ने कहा, 'हाँ, बैलोंवाला विचार अब छोड़ दिया है, कौन हमारे सानी-पानी करेगा ? बकरियों को पत्ते काटकर डाल दूँगा। बैलों को बाँधकर बैल ही बना रहना पड़ता है।"

"और किसानी ?"

"बँटाई में है, साझे में कर लेंगे।"

बिल्लेसुर ने लम्बे पतले बाँस के लग्गे में हँसिया बाँधा, बढ़ाकर गूलड़-पीपल-पाकर आदि पेड़ों की टहनियाँ छाँटकर बकरियों को चराने के लिये। तैयारी करते दिन चढ़ आया। बिल्लेसुर गाँव के रास्ते बकरियों को लेकर निकले। रामदीन मिले, कहा, "ब्राह्मण होकर बकरी पालोगे? लेकिन हैं बड़ी अच्छी बकरियाँ, खूब दूध देंगी, अब दो साल में बकरी-बकरों से घर भर जायगा, आमदनी काफ़ी होगी।" कहकर लोभी निगाह से बकरियों को देखते रहे। रास्ते पर जवाब देना बिल्लेसुर को वैसा आवश्यक नहीं मालूम दिया। साँस रोके चले गये। मन में कहा, "जब ज़रूरत पर ब्राह्मणों को हल की मूठ पकड़नी पड़ी है, जूते की दूकान खोलनी पड़ी है, तब बकरी पालना कौन बुरा काम है?" ललई कुम्हार अपना चाक चला रहे थे, बकरियों को देखकर एक कामरेड

के स्वर से बिल्लेसुर का उत्साह बढ़ाया। बिल्लेसुर प्रसन्न होकर आगे बढ़े। आगे मन्दिर था। भीतर महादेवजी, बाहर पीछे की तरफ़ महावीरजी प्रतिष्ठित थे। जब भी बिल्लेसुर गुरुमन्त्र छोड़ चुके थे, फिर भी बकरियों की भेड़िये से कल्याण-कामना किये बिना नहीं रहा गया—मन्दिर में गये। उन्हें महादेवजी से महावीरजी अधिक शक्ति वाले मालूम दिये। यह भी हो सकता है कि बाहर महावीरजी के पास जाने से वे गलियारे से जाती हुई बकरियों को भी देख सकते थे। अस्तु महावीरजी के पैर छूकर, मन-ही-मन उन्होंने कुछ कहा और फिर अपनी बकरियों का पीछा पकड़ा। खेत की हरियाली की तरफ़ लपकती बकरी को हटककर सामने लक्ष्य स्थिर करके बढ़े। मन्नू का पक्का कुँआ आया। गलियारे में ही खड़े-खड़े लग्गा बढ़ाकर गलियारे पर आती पीपल की निचली डाल से टहनियाँ छाँटने लगे। टहनियों के गिरते ही बकरियाँ पत्तियों से जुट गईं। जरूरत भर लच्छियाँ छाँटकर लग्गा डाल के सहारे खड़ाकर बिल्लेसुर कुँए की जगत पर चढ़कर बैठे बकरियों को देखते हुए। सामने पड़ती जमीन थी। बग़ल से एक बरसाती नाला निकला था। चरवाहे लड़के वहीं ढोर लिये इधर-उधर खड़े थे। बिल्लेसुर को देखा। उनकी बकरियों को देखा। भगाने की सूझी। सयाने लड़कों ने सलाह की। बात

तै हो गई कि खेदकर नाले में कर दिया जाय। बिल्लेसुर परेशान होंगे, खोजेंगे। मिलेंगी, मिलेंगी; न मिलेंगी, बला से। एक ने कहा, पासियों को ख़बर कर दी जाय तो नाले में मारकर निकोलेंगे, कुछ मास हमें भी मिलेगा। दूसरे ने कहा; गाभिन हैं, किस काम का मास। फिर भी बकरियों को भगाने का लोभ लड़कों से न रोका गया। सलाह करके कुछ बाहर तके रहे, कुछ बिल्लेसुर के पास गये। एक ने कहा, "काका, आओ, कुछ खेला जाय।" बिल्लेसुर मुस्कराये। कहा, "अपने बाप को बुला लाओ, तुम क्या हमारे साथ खेलोगे?" फिर सतर्क दृष्टि से बकरियों को देखते रहे। दूसरे ने कहा, "अच्छा काका, न खेलो; परदेश गये थे वहाँ के कुछ हाल सुनाओ।" बिल्लेसुर ने कहा, "बिना अपने मरे कोई सरग नहीं देखता। बड़े होकर परदेश जाओगे तब मालूम कर लोगे कि कैसा है।" एक तीसरे ने कहा, "यहाँ हम लोग हैं भेड़िये का डर नहीं; वह ऊँचे हार में लगता है।" बिल्लेसुर ने कहा, "इधर भी आता है, लेकिन आदमी का भेस बदलकर।"

यह कहकर बिल्लेसुर उठे। बकरियाँ एक-एक पत्ती टूँग चुकी थीं। जपाटे से बढ़कर लग्गा उठाया और हाँककर दूसरी तरफ़ ले चले। पड़ती ज़मीन से ऊँचे, बाग़ की तरफ़ चलते हुये कुछ रियाँ की लच्छियाँ छाँटीं। दीनानाथ गाँव जाते हुए

मिले। लोभी निगाह से बकरियों को देखते हुए पूछा, "कितने की ख़रीदीं?" बिल्लेसुर ने निगाह ताड़ते हुए कहा, अधियाँ की मिली हैं।" बिल्लेसुर के जगे भाग से दीना की चोटी खड़ी हो गई—ऐसा तअज्जुब हुआ। पूछा—"तीनों?" बिल्लेसुर ने अपनी ख़ास मुस्कराहट के साथ जवाब दिया, "नहीं तो क्या—एक?" दीना ने अरथाकर पूछा, "यानी बकरी तुम्हारी, दूध तुम्हारा; मर जाय, उसकी; बच्चे, आधे-आधे?" बिल्लेसुर ने कहा, "हाँ।" बिल्लेसुर के असम्भावित लाभ के बोझ से जैसे दीना की कमर टेढ़ी हो गई। दबा हुआ बोला, "हाँ, गुसैयाँ जिसको दे।" मन में ईर्ष्या हुई। बिल्लेसुर अकेले मज़ा लेंगे? दीना नहीं अगर बकरियों को पेट में न डाला। बिल्लेसुर ने देखा, दीना के माथे पर बल पड़े हुए थे, आँखों में इरादा ज़ाहिर था। बिल्लेसुर को ज़िन्दगी के रास्ते रोज़ ऐसी ठोकर लगी है, कभी बचे हैं, कभी चूके हैं। अब बहुत सँभले रहते हैं। हमेशा निगाह सामने रहती है। वहाँ से बढ़ते हुये गूलड़ के पेड़ के तले गये। कुछ पत्ते काटे और उनका बोझ बनाकर बाँध लिया घर में बकरियों को खिलाने के इरादे। जब बकरियों का पेट भर गया तब बोझ सर पर रखकर दूसरे रास्ते से बकरियों को लिये हुए घर लौटे।

८

बिल्लेसुर के अपने मकानके इतने हिस्से हुए थे कि बकरियों को लेकर वहाँ रहना असम्भव था। भाइयों को राजयक्ष्मा न होने के कारण बकरियों की गन्ध से ऐतराज़ होता। दूसरे; पुराना होकर घर कई जगह गिर गया था। रात को भेड़िये के रूप से चोर आ सकते थे और बकरियों को उठा ले जा सकते थे। ऐसे अनेक कारणों से बिल्लेसुर ने गाँव में एक ख़ाली पड़ा हुआ पुराना मकान रहने के लिये लिया। ख़रीदा नहीं; यह शर्त रही कि छायेंगे, छोपेंगे, गिरने से मकान को बचाये रहेंगे। नोटिस मिलने पर छः महीने में मकान ख़ाली कर देंगे। मालिक, मकान परदेश में रहते थे, एक तरह वहीं बस गये थे। जिनके सुपुर्द मकान था; वे सोलह आने नज़र लेकर बिल्लेसुर पर दयालु हो गये थे।

यह मकान परदेशी का होने के कारण वज़ादार हो यह बात नहीं। परदेशी जब इस मकान में रहते थे, बिल्लेसुर की ही तरह देशी थे। देश की दीनता के कारण ही परदेश गये थे। मकान के सामने एक अन्धा कुँआ है और एक इमली का पेड़। बारिश के पानी से धुलकर दीवारें ऊबड़-खाबड़ हो गई हैं, जैसे दीवारों से ही पनाले फूटे हों। भीतर के पनाले का मुँह भर जाने से बरसात का पानी दहलीज़ की डेहरी के नीचे गड्ढा बनाकर बहा है। गड्ढा बढ़ता-बढ़ता ऐसा हो गया है कि बड़े जानवर, कुत्ते जैसे आसानी से उसके भीतर से निकल सकते हैं। दहलीज़ की फ़र्श कहीं भी बराबर नहीं; उसके ऊपर लेटने की बात क्या, चारपाई भी उस पर, नहीं डाली जा सकती। दूसरी तरफ़ एक ख़मसार है और उसी से लगी एक कोठरी। इसी में बिल्लेसुर आकर रहे। दरवाज़े का गढ़ा तोप दिया। बाक़ी घर की धीरे-धीरे मरम्मत करते रहे।

एक वक्त रोटी पकाते थे, दोनों वक्त खाते थे। इस तरह साल भर से ज़्यादा झेल ले गये। उनका लक्ष्य और काम बढ़ते गये। लेकिन अड़चन से पीछा नहीं छूटा। गाँव में जितने आदमी थे, अपना कोई नहीं, जैसे दुश्मनों के गढ़ में रहना

हो। भाई भी अपने नहीं। बिल्लेसुर सोचते थे, क्यों एक दूसरे के लिए नहीं खड़ा होता। जवाब कभी कुछ नहीं मिला। मुमकिन, दुनिया का असली मतलब उन्होंने लगाया हो। फिर भी, जान रहते काम करना पड़ता है, दूसरे की मदद करनी पड़ती है; सहारा लेना पड़ता है, यह सच है। इधर कोई ध्यान नहीं देता, यह कमज़ोरी दूर नहीं हो रही; कोई सूरत भी नज़र नहीं आ रही। हमारे सुकरात के ज़बान न थी, पर इसकी फ़िलासफ़ी लचर न थी; सिर्फ़ कोई इसकी सुनता न था; इसे भी भूलभुलैया से बाहर निकलने का रास्ता नहीं दिखा, इसलिए यह भटकता रहा।

कुछ वक्त और बीता। बकरियों के साथ ही रहते थे। सारे घर में लेंड़ियाँ। दमदार पहले से थे, बकरियों के साथ रहकर और हो गये थे। अब तक ख़रीदी बकरियों के नाती-नातिनें पैदा हो चुकी थीं। कुछ पट्ठे बेच भी चुके थे। अच्छी आमदनी हो चली थी। गाँववालों की नज़र में और खटकने लगे थे। एक दफ़ा कुछ लोग बिल्लेसुर के ख़िलाफ़ ज़मींदार के यहाँ फ़रियाद लेकर गये थे कि गाँव के कुल पेड़ बिल्लेसुर ने ठूँठे कर दिये—उनकी बकरियाँ बिकवा दी जानी चाहिए। ज़मींदार ने, अच्छा, कहकर उनका उत्साह बढ़ाकर टाल दिया,

क्योंकि बिल्लेसुर की बकरियों पर उनकी निगाह पहले पड़ चुकी थी और वे सरकारी पेड़ों की छँटाई की एक रक़म बिल्लेसुर से तै करके लेने लगे थे। गाँववाले दिल का गुबार बिल्लेसुर को बकरिहा कहकर निकालने लगे। जवाब में बिल्लेसुर बकरी के बच्चों के वही नाम रखने लगे जो गाँववालों के नाम थे।

९

नहाकर, रोटी पका-खाकर, शाम के लिए रखकर, बिल्लेसुर बकरियों को लेकर निकले। कन्धे में वही लग्गा पड़ा हुआ। जामुन पक रही थी। एक डाल में लग्गा लगाकर हिलाया। लग्गे के एक तरफ़ हँसिया, दूसरी तरफ़ लगुसी बँधी थी। फरेंदे गिरे। बिनकर अँगोछे में ले लिये और खाते हुए गलियारे से चले। आगे महावीरजी वाला मन्दिर मिला। चढ़ गये और चबूतरे के ऊपर से मुँह की गुठली नीचे फेंककर महावीरजी के पैर छुए और रोज़ की तरह कहा, मेरी बकरियों की रखवाली किये रहना। तुलसीदासजी या सीताजी की जैसी अन्तर्दृष्टि न थी; होती, तो देखते, मूर्त्ति मुस्कराई। जल्दी-जल्दी पैर छूकर और कहकर मन्दिर के चबूतरे से नीचे उतरे। बकरियों को लेकर गलियारे से होते हुए बाग़ की ओर चले। दुपहर हो रही थी। पानी का गहरा दौंगरा गिर चुका था।

ज़मीन गीली हो गई थी। ताल-तलैयाँ, गड़ही-गढ़े बहुत-कुछ भर चुके थे। कपास, धान, अगमन ज्वार-बाजरे, अरहर, सनई, सन, लोबिया, ककड़ी-खीरे, मक्की, उर्द आदि बोने के लोभी किसान तेज़ी से हल चला रहे थे। किसानी के तन्त्र के जानकार बिल्लेसुर पहली वर्षा की मटैली सुगन्ध से मस्त होते हुए मौलिक किसानी करने की सोचते अपनी इसी धुन में बकरियों को लिये चले जा रहे थे। उन बँटाई उठाये खेतों में एक खेत ख़ुद-काश्त के लिए ले लिया था। बरसातवाली किसानी में मिहनत ज़्यादा नहीं पड़ती। एक बाह दो बाह करके बीज डाल दिया जाता है। वर्षा के पानी से खेती फूलती-फलती है। बैल नहीं हैं, अगमन जोतने-बोने के लिए कोई माँगे न देगा। बिल्लेसुर ने निश्चय किया कि छः-सात दिन में अपने काम भर की ज़मीन वे फावड़े से गोड़ डालेंगे। गाँव के लोग और सब खेती करते हैं, शकरकन्द नहीं लगाते। इसमें काफ़ी फ़ायदा होगा। फिर अगहन में उसी खेत में मटर बो देंगे। जब शकरकन्द बैठेगी, रात को ताकना होगा, तब किसी को कुछ देकर रात को तका लेंगे। एक अच्छी रक़म हाथ लग जायगी।

निश्चय के बाद जब बिल्लेसुर इस दुनिया में आये तब देखा, वे बहुत दूर बढ़ आये हैं। आग्रह और उतावली से जाँच की निगाह बकरियों पर डाली--गंगा, यमुना, सरजू, पारवती

हैं; सेखाइन, जमीला, गुलबिया, सितबिया हैं; रमुआ, स्यमुआ, भगवतिया, परभुआ हैं, टुरुई है, और दिनवा? बिल्लेसुर चौकन्ने होकर देखने लगे, पीछे दूर तक निगाह दौड़ाई। दीनानाथ न दिखे। कलेजा धक्-से हुआ। दीनानाथ सबसे तगड़े थे, वही पिछड़ गये, या कहाँ गये। बुलाने लगे, "उर्र्र्, उर्र्र्, ! दिनवा अ ले—अ ले उर्र्र्र् ! आव—आव, दिनवा ! उर्र्र्, उर्र्र्; बेटा दीनानाथ, उर्र्र् !" टुरुई मिमियाने लगी। दीनानाथ की कोई आहट न मिली। "टुरुई, कहाँ है दिनवा?" टुरुई मिमियाती हुई बिल्लेसुर के पास आ गई। बिल्लेसुर बकरियों को लेकर उसी रास्ते लौटे। उसी नाले के पास लड़के ढोर लिये खड़े थे। बिल्लेसुर को देखकर मुस्कराये। बिल्लेसुर का हृदय रो रहा था। मुस्कराहट से दिमाग़ में गरमी चढ़ गई। लेकिन ज़ब्त किया। भलमन्साहत से पूछा, "बच्चा, हमारा बकरा इधर रह गया है?" "कौन बकरा?" "पट्ठा एक, हम दिनवा कहते थे।" "दिनवा कहते थे तो दिनवा से पूछो। हम नहीं जानते, कहाँ है।"

बिल्लेसुर ने फिर पूछताछ नहीं की। सन्देह हुआ। जी में आया, चलकर नाले के किनारे खोजें, लेकिन बकरियों को किसके भरोसे छोड़ जायँ, फिर एक बच्चा ग़ायब कर दिया जाय तो क्या करेंगे? जल्दी-जल्दी मकान की तरफ़ बढ़े। बच्चों

और बकरियों को भगाते ले चले। रास्ते में दो-एक आदमी मिले, पूछा, "क्या है बिल्लेसुर, इतनी जल्दी और भगाये लिये जा रहे हो?" बिल्लेसुर ने कहा, "भय्या, एक पट्ठा किसी ने पकड़ लिया है, वहाँ नाले के पास, लड़के ढोर लिये खड़े हैं, बताते नहीं।" सुननेवालों ने कहा, "जानते हो गाँव में ऐसे चोर हैं कि कठैली भी आँगन में रह जाय तो अटारी से उतर-कर उठा ले जायँ। बोलो तो हार-बाहर बेइज़्ज़त करें। कहाँ कोई गाँव छोड़कर भग जाय?" बिल्लेसुर बढ़े। दरवाज़ा खोला। कोठरी में बच्चों को और दहलीज में बकरियों को ताले के अन्दर बन्द करके डंडा लेकर दीना का पता लगाने चले।

पहले दीना के घर गये। पता लगा कि वह घर में नहीं है। वहाँ से सीधी ख़ुश्की से नाले की ओर बढ़े। ऊँचे टीले पर एक लड़का बैठा इधर-उधर देख रहा था। बिल्लेसुर समझ गये। नाले के किनारे-किनारे बढ़े। लड़के ने एक ख़ास तरह की आवाज़ की। बिल्लेसुर समझ गये कि पास ही कहीं है। बढ़ते गये, बढ़ते गये। दूर एक झाड़ी दिखी, निश्चय हुआ कि यहीं कहीं मारा पड़ा होगा। झाड़ी के पास पहुँचे, वहाँ कोई नहीं था। झाड़ी के भीतर गये। अच्छी तरह देखने लगे, ख़ून से तर ज़मीन दिखी। तअज्जुब से देखते रहे। बकरा या आदमी न दिखा। चेहरा उतर गया। दिल रो रहा था, लेकिन

आँखों में आँसू न थे। कहीं इन्साफ़ नहीं, सिर्फ़ लोग नसीहत देते हैं। चलकर कुँए के पास आये। बहुत गरमा गये थे। जगत पर बैठे। बकरा मार डाला गया। लड़के जानते हैं, लेकिन बतलाते नहीं। आठ रुपये का था। जी रो उठा। कोई मददगार नहीं। ढलते सूरज की धूप सिर पर पड़ रही थी, लेकिन बिल्लेसुर ख्याल में ऐसे डूबे थे कि गरमी पहुँचकर भी न पहुँचती थी।

आज बकरियाँ भूखी हैं। शाम हो आई है, चराने का वक्त नहीं। लग्गा नहीं; पत्तियाँ नहीं काटीं; रात को भी भूखी रहेंगी। इस तरह कैसे निबाह होगा? बिना खाये सबेरे दूध न होगा। बच्चे भूखे रहेंगे। दुबले पड़ जायँगे। बीमारी भी जकड़ सकती है। चोकर रक्खा है, लेकिन उतनी बकरियों और बच्चों को क्या होगा? रात को पेड़ छाँटना पड़ेगा।

सूरज डूब गया। बिल्लेसुर की आँखों में शाम की उदासी छा गई। दिशाएँ हवा के साथ साँयँ-साँयँ करने लगीं। नाला बहा जा रहा था जैसे मौत का पैग़ाम हो। लोग खेत जोतकर धीरे-धीरे लौट रहे थे, जैसे घर की दाढ़ के नीचे दबकर, पिसकर मरने के लिए। चिड़ियाँ चहक रही थीं अपने-अपने घोंसले की डाल पर बैठी हुई, रो-रोकर साफ़ कह रही थीं, रात को घोंसले में जंगली बिल्ले से हमें कौन बचायेगा? हवा

चलती हुई इशारे से कह रही थी, सब कुछ इसी तरह बह जाता है।

बिल्लेसुर डंडा लिए धीरे-धीरे गाँव की ओर चले। ढाढ़स अपने आप बँध रहा था। दूसरे काम के लिए दिल में ताक़त पैदा हो रही थी। भरोसा बढ़ रहा था। गाँव के किनारे आये। महावीरजी का वह मन्दिर दिखा। अँधेरा हो गया था। सामने से मन्दिर के चबूतरे पर चढ़े। चबूतरे-चबूतरे मन्दिर की उल्टी प्रदक्षिणा करके, पीछे महावीरजी के पास गये। लापरवाही से सामने खड़े हो गये और आवेग में भरकर कहने लगे—"देख, मैं ग़रीब हूँ। तुझे सब लोग ग़रीबों का सहायक कहते हैं, मैं इसीलिए तेरे पास आता था, और कहता था, मेरी बकरियों को और बच्चों को देखे रहना। क्या तूने रखवाली की, बता, लिए थूथन-सा मुँह खड़ा है?" कोई उत्तर नहीं मिला। बिल्लेसुर ने आँखों से आँखें मिलाये हुए महावीरजी के मुँह पर वह डंडा दिया कि मिट्टी का मुँह गिली की तरह टूटकर बीघे भर के फ़ासले पर जा गिरा।

१०

बिल्लेसुर, जैसा लिख चुके हैं, दुख का मुँह देखते-देखते उसकी डरावनी सूरत को बार-बार चुनौती दे चुके थे। कभी हार नहीं खाई। आजकल शहरों में महात्मा गान्धी के बकरी का दूध पीने के कारण, दूध बकरीदी की बड़ी खपत है, इस-लिए गाय के दूध से उसका भाव भी तेज़ है; मुमकिन, देहात में भी यह प्रचलन बढ़ा हो; पर बिल्लेसुर के समय सारा संसार बकरी के दूध से घृणा करता था; जो बहुत बीमार पड़ते थे, जिनके लिए गाय का दूध भी मना था, उन्हें बकरी के दूध की व्यवस्था दी जाती थी। बिल्लेसुर के गाँव में ऐसा एक भी मरीज़ नहीं आया। जब दूध बेचा नहीं बिका, किसी को कृपा-पात्र बनवाये रहने के लिए व्यवहार में देने पर मुँह बनाने लगा; तब बिल्लेसुर ने खोया बनाना शुरू किया। बकरी के दूध का खोया बनाने में पहले प्रकृति बाधक हुई; बकरी के दूध में

पानी का हिस्सा बहुत रहता है; बड़ी लकड़ी लगानी पड़ी; बड़ी देर तक चूल्हे के किनारे बैठ रहना पड़ा; बड़ी मिहनत; पहाड़ खोदने के बाद जब चुहिया निकली—खोये का छोटा-सा गोला बना, तब मन भी छोटा पड़ गया। भैंस के दूध के सेर भर में पाव भर का आधा भी नहीं होता था। धीरज बाँधकर बेचने गये, भजना हलवाई जोतपुरवाले के यहाँ, वह गट्टे काट रहा था, जल्दी में उसने देखा नहीं, तोलकर दाम दे दिये; दूसरे दिन गये तो तोलकर रख लिया। बिल्लेसुर ने पूछा, "दाम ?" उसने कहा, "दाम कल दे चुका हूँ; मैं समझा था भैंस का खोया है, यह बकरी का खोया है, बकरी के खोये के आधे दाम भी बहुत हैं, मैं बकरी का खोया नहीं लेता, अब न ले आना, सारी मिठाई बरबाद हो जाती है, गाहक गाली देंते हैं; न घी है, न स्वाद; जो कुछ थोड़ा-सा घी निकलता है, वह दूसरे घी में मिलाया नहीं जा सकता—कुल घी बदबू छोड़ने लगता है।" बिल्लेसुर सर झुकाकर चुपचाप चले आये। माल है, पर बिकता नहीं। तब तरकीब निकाली। इसमें खोया बनाने से कम मिहनत पड़ती है। कन्डे की आग परचाकर हन्डी में दूध रख देने लगे, अपना काम भी करते थे, दूध गर्म हो जाने पर ठंडा करके जमा देते थे, दूसरे दिन मथकर मक्खन निकाल लेते थे। मट्ठा खुद भी पीते थे, बच्चों को भी पिलाते थे।

मक्खन का घी बनाकर उसमें चौथाई हिस्सा भैंस का घी खरीद-कर मिला देते थे, और छटाक आधपाव सस्ते भाव में बाज़ार जाकर बेच आते थे। देहात में गाय, भैंस और बकरी का मिला घी भी बिकता है। जिनके यहाँ जानवरों की दोनों या तीनों किस्में हैं, वे दूध अलग-अलग नहीं जमाते। बिल्लेसुर का काम चल निकला। बकरे के मारे जाने को उन्होंने हानि-लाभ-जीवन-मरण की फिलासफ़ी में शुमार कर अपने भविष्य की ओर देखा। उन्होंने निश्चय किया, बकरियों को हार में चराने न ले जायँगे, घर में ही खिलाएँगे जब तक खेत तैयार न हो जाय और शकरकन्द की बौंड़ी न लग जाय। सबेरा होते ही बिल्लेसुर फावड़ा लेकर खेत में जुटे। रात को इतनी पत्ती काट लाये थे कि आज दिन भर के लिये बकरियों को काफ़ी चारा था। बकरियाँ और बच्चे उसी तरह कोठरी और दहलीज में बन्द थे। फावड़े से खेत गोड़ते देखकर गाँव के लोग मज़ाक़ करने लगे, लेकिन बिल्लेसुर बोले नहीं, काम में जुटे रहे। दुपहर होते-होते काफ़ी जगह गोड़ डाली। देख-कर छाती ठंढी हो गई। दिल को भरोसा हुआ कि छः-सात दिन में अपनी मिहनत से बकरे का घाटा पूरा कर लेंगे। दुपहर होने पर घर आये, नहाकर लप्सी बनाई और खाकर कुछ देर आराम किया। दुपहर अच्छी तरह ढल गई, तीसरा

पहर पूरा नहीं हुआ था, उठकर फिर खेत गोड़ने चले। शाम तक खेत गोड़कर बकरियों के लिये पत्ते काटकर पहर भर रात होते घर आये। सात दिन की जगह पाँच ही दिन में बिल्लेसुर ने खेत का वह हिस्सा गोड़ डाला। खेत से एक पाटी निकाल ली। लोग पूछते थे, क्या बोने का इरादा है बिल्लेसुर? बिल्लेसुर कहते थे, भंग। देहात में कोई किसी को मन नहीं देता, यों कहीं भी नहीं देता। बिल्लेसुर पता लगाकर शकरकन्द की बौंड़ी ले आये। एक दिन लोगों ने देखा, बिल्लेसुर शकरकन्द लगा रहे हैं। पानी बरसने और शकरकन्द की बौंड़ी के फैलने के साथ बिल्लेसुर आलू-की-जैसी मेड़ों पर मिट्टी चढ़ाने लगे।

११

जब से त्रिलोचन के बैल न लेकर बिल्लेसुर ने बकरियाँ खरीदीं तभी से इस बेचारे को जटने के लिये त्रिलोचन पेच भर रहे थे। बकरियों के बच्चों के बढ़ने के साथ गाँव में धनिकता के लिये बिल्लेसुर का नाम भी बढ़ा। लोग तरह-तरह की राय जाहिर करने लगे। क्वार का महीना; बिल्लेसुर की

शकरकन्द की बेलें लहलही दिख रही थीं, लोग अन्दाज़ा लड़ा रहे थे कि इतने मन शकरकन्द निकलेगी; बिल्लेसुर छप्पर के नीचे बकरी के दूध में सानकर सत्तू-गुड़ खा रहे थे, त्रिलोचन आये। बकरी के बच्चे ढकने का एक झौआ औंधाया था, उस पर चढ़कर बैठने के लिये घूमे, लेकिन बिल्लेसुर को हाथ हिलाते देखकर वहीं ज़मीन पर बैठ गये। "एक बड़ी बढ़िया ख़बर है, बिल्लेसुर।" बिल्लेसुर से मुस्कराते हुए कहा। उपदेशक की मुद्रा से हथेली उठाकर बिना कुछ बोले, आश्वासन देते हुए, बिल्लेसुर ने समझाया, कुछ देर धीरज रक्खो। त्रिलोचन ने पूछा, भोजन करते बोलते नहीं क्या? गम्भीर भाव से आँखें मूँदकर सिर हिलाते हुए बिल्लेसुर ने जवाब दिया। त्रिलोचन अपनी बातचीत का सिलसिला मन-ही-मन जोड़ते रहे।

जल्दी-जल्दी सत्तू खाकर बिल्लेसुर उठे। पनाले के पास बैठकर हाथ धोये, कुल्ले किये, अभ्यास के अनुसार जनेऊ में बँधी ताँबे की दंतखोदनी उठाकर दाँत खरिका किये, फिर कुल्ले किये, और एक डकार छोड़कर सर झुकाये हुए कोठरी के भीतर गये। त्रिलोचन देखते रहे। बिल्लेसुर एक खटोला निकालकर बाहर ले आये। डालकर कहा, आओ, ज़रा सँभलकर बैठना, हचकना नहीं। त्रिलोचन उठकर खटोले पर बैठे।

एक तरफ़ बिल्लेसुर बैठे।

त्रिलोचन ने बिल्लेसुर को देखा, फिर आश्चर्य से आँखें निकालकर कहा, "करना चाहो तो एक बड़ा अच्छा ब्याह है।"

विवाह के नाममात्र से बिल्लेसुर की नसों में बिजली दौड़ गई; लेकिन हिन्दू-धर्म के अनुसार उसे उपयोगितावाद में लाते हुये कहा, अब देखते ही हो, सत्तू खाना पड़ा है। औरत कोई होती तो मरती हुई भी रोटी सेंककर रखती।"

"यथार्थ है," त्रिलोचन गम्भीर होकर बोले।

बिल्लेसुर को बढ़ावा मिला, कहा, "गाँव के चार भाइयों का मोह है, पड़ा हूँ, नहीं तो मरने के लिये दुनिया भर में मुझे ठौर है।"

"अब यह भी तुम समझाओगे तब समझेंगे?"

बिल्लेसुर का पौरुष जग गया। उन्होंने कहा, "बंगाल गया था, चाहता तो एक बैठा लेता; लेकिन बापदादे का नाम भी तो है? सोचा, कौन नाक कटाये? तुम्हीं लोग कहते, बिल्लेसुर ने बाप के नाम की लुटिया डुबा दी।" बिल्लेसुर अपनी भूमिका से एकाएक विषय पर नहीं आ सकते थे। आने के लिये बढ़कर फिर हट जाते थे। त्रिलोचन ने कहा,

"सारा गाँव तुम्हारी तारीफ़ करता है; गाँव ही नहीं, ग्वेंड़ भी कि बिल्लेसुर मर्द आदमी है।"

बिल्लेसुर ने कहा, "नाम के लिए दुनिया मरती है। इतनी मिहनत हम क्यों करते हैं?" नाम ही नहीं तो कुछ नहीं। हमारे बाप मरकर भी नहीं मरे, क्यों? और अगर उनके पोता न रहा तो?

त्रिलोचन ने कहा, "तुम्हारे जैसा समझदार लड़का जिनके है, उनके पोता कैसे न रहेगा?" कहकर त्रिलोचन गम्भीर हो गये।

बिल्लेसुर ने कहा, "माँ-बाप ही दुनिया के देवता हैं। धर्म तो रहा ही न होता अगर माँ-बाप न रहे होते।"

त्रिलोचन ने कहा, "बेशक! धर्म की रक्षा हरएक को करनी चाहिये। तभी तो धर्म के पीछे जान दे देने के लिए कहा है।"

"अब देखो, खेत में काम करने गये, घर आये, औरत नहीं; बिना औरत के भोजन विधि-समेत नहीं पकता; न जल्दी में नहाते बनता है, न रोटी बनाते, न खाते; धर्म कहाँ रहा?" बिल्लेसुर उत्तेजित होकर बोले।

"हम तो बहुत पहले समझ चुके थे, अब तुम्हीं समझो।" कहकर त्रिलोचन ने तीसरी आँख पर मन को चढ़ाया।

बिल्लेसुर ने एक दफ़ा त्रिलोचन को देखा, फिर सोचने लगे, "देखो, दलाल बनकर आया है। सोचता है, दुनिया में हम ही चालाक हैं। अभी रुपए का सवाल पेश करेगा। पता नहीं, किसकी लड़की है, कौन है। ज़रूर कुछ दाग होगा। अड़चन यह है कि निबाह नहीं होता। भूख लगती है, इसलिये, खाना पड़ता है, पानी बरसता है, धूप होती है, लू चलती है, इसलिये मकान में रहना पड़ता है। मकान की रखवाली के लिए ब्याह करना पड़ता है। मकान का काम स्त्री ही आकर सँभालती है। लोग तरह-तरह की चीज़-वस्तुओं से घर भर देते हैं; स्त्री को जेवर-गहने बनवाते हैं। यों सब झोल है—ढोल में सब पोल ही पोल तो है ?" बिल्लेसुर को गुरुआइन की याद आई, गाँव के घर-घर का सुना इतिहास आँख के सामने घूम गया। अब तक वे झूठ कहते रहे। यही कारण है कि बुलबुल काँपे में फँसता है। त्रिलोचन के ज्ञान में रहने की प्रतिक्रिया बिल्लेसुर में हुई। फिर यह सोचकर कि अपना क्या बिगड़ता है,—इसका मतलब मालूम कर लेना चाहिये, करुण स्वर से बोले, "हाँ भय्या, समझदार तुमको गाँव के सभी मानते हैं।"

ख़ुश होकर त्रिलोचन ने कहा, "ऐसी औरत गाँव में आई नहीं—सोलह साल की, आगभभूका।"

बिल्लेसुर को देवियों की याद आ गई थी, इसलिये बिललित

होकर सँभल गये। कहा, "तुम्हारी आँख कभी धोखा खा सकती है? कहाँ की है?"

"यह तो न बतायेंगे, जब ब्याहने चलोगे, तभी मालूम करोगे।"

"पहले तो फलदान चढ़ेंगे, या इसकी भी ज़रूरत नहीं?"

"फ़लदान चढ़ेंगे, लेकिन कोई पूछ-ताछ न होगी, तिवारियों के यहाँ की लड़की है। सब काम हमारी मारफ़त होगा।"

"किस गाँव की है?"

"इतना बता दिया तो क्या रह जायगा? यह ब्याह से पहले मालूम हो ही जायगा। मगर एक बात है। उनके यहाँ ब्याह का ख़र्च नहीं। भलेमानस हैं। लड़की नहीं बेचेंगे, पर ख़र्च तुम्हें देना होगा।"

"कितना?"

त्रिलोचन हिसाब लगाने लगे, खुलकर कहते हुए, "तुम्हारे यहाँ फलदान चढ़ाने आयेंगे तो ठहरेंगे हमारे यहाँ। थाल में सात रुपये रक्खेंगे और नारियल के साथ एक थान। इसमें बीस रुपये का ख़र्च है। यह तुम्हें फलदान के दिन से सात रोज़ पहले दे देना होगा। फिर फलदान चढ़ जाने पर डेढ़-सौ रुपए विवाह के ख़र्च के लिए उस दिन देना पड़ेगा, सब हमारी मारफ़त। भले आदमी हैं, नहीं निबाह सकते। तुमसे

हाथ फैलाकर लें, तो कैसे ? द्वार के चार से, ब्याह, भात और बड़हार, बरतौनी तक डेढ़ सौ, दाल में नमक के बराबर भी नहीं। लेकिन तुम्हें भी तो नहीं उजाड़ सकते ? कुल में तुम से बड़े।"

बिल्लेसुर ने कहा, "कुल में बड़े हैं तो ब्याह फलेगा नहीं। मन्नू बाजपेई ने, रुपये न होने से, उतरकर ब्याह किया, लड़की बेवा हो गई। भय्या, मुझे तो यही बड़ा डर है कि कहीं ....."

त्रिलोचन का चेहरा उतर गया। बोले, "घबड़ाते हो नाहक। जितने बड़े हैं, सब बने हुए हैं। असल में बड़े हैं नहीं। मन्नू बाजपेयी की लड़की ने अपने पति को मार डाला। कहते हैं, उसकी उम्र ज्यादा हो गई थी, मायके में ही वह बिगड़ गई थी; इसलिए मन्नू ने उसका ब्याह उतरकर कर दिया था। अपने यार के कहने से उसने पति को ज़हर खिला दिया। वह कुछ दिन से बीमार था, दवा हो रही थी।"

"कहीं यह भी ऐसा ही मुझ पर करे।" बिल्लेसुर शंका की दृष्टि से देखने लगे।

"कहता तो हूँ, किसी तरह का ख़ौफ़ न खाओ। बिचवासी मैं हूँ। लड़की में दाग़, न कलङ्क, न चाल-चलन बिगड़ा, न काली-कानी-लङ्गड़ी-लूली।"

"जब तुम कह रहे हो तो एतबार सोलहो आने है; लेकिन

पता बिना जाने दस रोज़ पहले आये नातेदारों से क्या कहूँगा ? उनसे यह भी नहीं कहते बनता कि त्रिलोचन भय्या जानते हैं; इसीलिए पता पूछता हूँ। दूसरी बात, कुण्डली विचरवा लेनी है। लकड़ी की कुण्डली ले आओ ! मैं अपने सामने बिचरवाऊँगा। लड़की मंगली निकली तो बेमौत मरना होगा ? ब्याह करना है तो आँखें खोलकर करना चाहिये।"

त्रिलोचन मन से बहुत नाराज़ हुये। बोले, "ऐसी बातें करते हो जैसे बाला के हो। तुम्हारे यहाँ वे नहीं आए और कभी कोई भलामानस न आयेगा। हम कहते थे कि भद्रा के जैसे मारे इधर-उधर घूमते हो, तुम्हारा घर बस जाय, लेकिन तुम आ गये अपनी अस्लियत पर। मान लो, तुम्हीं मङ्गली निकले, तो ? कौन बाप अपनी लड़की तुम्हें सौंप देगा ? रही बात नातेदारी वाली, सो हम तो इसे सोलहो आने बेवकूफ़ी समझते हैं। बैठेबैठाये पच्चीस रुपये का ख़र्च सिर पर। हम तो कहते हैं, चुपचाप चले चलो, विवाह कर लाओ। लड़की के बाप का नाम मालूम करना चाहते हो तो चले चलो, उनका घर भी देख आओ। लेकिन तुम्हारा जाना शोभित नहीं है, गाँव भर तुम दोनों को हँसेंगे।"

बिल्लेसुर को कुछ विश्वास हुआ। लेकिन रुपये की सोच-

कर कटे। लड़की के रूप का मोह भी घेरे था, सैकड़ों कलिया चटक रही थीं, खुशबू उड़ रही थी, पर त्रिलोचन पर पूरा-पूरा विश्वास न हो रहा था। पूछा, यहाँ से कितनी दूर है ?"

"तीन-चार कोस होगा।"

बिल्लेसुर ने सोचा, एक दिन में चले चलेंगे और लौट भी आयेंगे। बकरियों को बड़ी तकलीफ़ न होगी। पत्ते काटकर डाल जायेंगे। बोले "तो चले चलो भय्या, देख लेना चाहिये, जिस दिन कहो तैयारी कर दी जाय।"

त्रिलोचन ने मतलब गाँठकर कहा, "अच्छा आज के चौथे दिन चलेंगे।"

बिल्लेसुर को उस रात नींद न आई। वही रूप देखते रहे। बहुत गोरी है सोचते रामरतन की स्त्री की याद आई। सोलह साल की है सोचा तो रामचरन सुकुल की बिटिया की सूरत सामने आ गई। बड़ी-बड़ी आँखें होंगी, जैसी पुखराजबाई की लड़की हसीना की हैं। इस घर में आयेगी तो घर में उजाला

छाया रहेगा। जिस कोठरी में बच्चे रक्खे जाते हैं उसमें उसका सामान रहेगा। बच्चे दहलीज में रहेंगे। एक छप्पर डाल लेंगे, सब ऋतुओं के लिए आराम रहेगा।

एक दफ़ा भी बिल्लेसुर ने नहीं सोचा कि बकरी की लेंडियों की बदबू से ऐसी औरत एक दिन भी उस मकान में रह सकेगी।

सबेरे उठकर पड़ोस के एक गाँव में बज़ाज़ के यहाँ गये और कुर्त्ते का कपड़ा लिया, साफ़ा ख़रीदा गुलाबी रंग का, धोती एक ली। दरजी को कुर्त्ते की नाप दी। उसी दिन बना देने के लिए कहा। गाँव के चमार से जूते का जोड़ा ख़रीदा।

इधर यह सब कह रहे थे, उधर ताड़े रहे कि त्रिलोचन कहाँ हैं। तीसरे दिन त्रिलोचन घर से निकले। पहनावा और हाथ का डंडा देखकर बिल्लेसुर समझ गये कि जा रहा है, बातचीत करके कल इन्हें ले जायगा। चलने की दिशा देख-कर अपने साधारण पहनावे से दूर-दूर रहकर, पीछा किया। त्रिलोचन बाबू के पुरवा के सीधे कच्ची सड़क छोड़कर मुड़े। बिल्लेसुर दूर पुरवा के किनारे खड़े होकर देखने लगे कि त्रिलो-चन दूसरे गाँव के लिये पुरवा से बाहर निकलते न दिखे, तब बिल्लेसुर को विश्वास हो गया कि यहीं है। वे भी गाँव के

भीतर गये। निकास पर एक आदमी मिला। बिल्लेसुर ने पूछा, "यहाँ श्यामपुर के त्रिलोचन आये हैं?" आदमी ने कहा, "हाँ, वहाँ रामनारायण के यहाँ बैठा है ठग कहीं का। दोनों एक से। किसी का गला नाप रहे होंगे।"

बिल्लेसुर का कलेजा धक से हुआ। पूछा, "रामनारायण के लड़की-लड़के कुछ हैं?"

आदमी चौंककर बिल्लेसुर को देखने लगा, "तुम कहाँ रहते हो? तुम रामनारायण को नहीं जानते? उसके साले के लड़की-लड़के! पूछो, ब्याह भी हुआ है?"

आदमी इतना कहकर आगे बढ़ा। बिल्लेसुर को बड़ी कायली हुई। वे उसी तरफ़ मन्नी की ससुराल को चले। मन्नी की सास से मिले। भली-बुरी सुख-दुख की बातें हुईं। बिल्लेसुर ने ढाढस बँधाया। कहा, ख़र्चा न हो तो आकर ले जाया करो। कहकर एक रुपया हाथ पर रख दिया। मन्नी अच्छी तरह हैं, कहा। उनकी लड़की की अच्छी सेवा होती है, मन्नी उसकी बड़ी देख-रेख रखते हैं। अब वह बहुत बड़ी हो गई है।

मन्नी की सास बहुत प्रसन्न हुईं। रुपया उठा लिया और पूछा, घर बसा या नहीं। बिल्लेसुर ने जवाब दिया कि घर माँ-

बाप के बसाये बसता है। मन्नी की सास ने कहा कि वे दस-पन्द्रह दिन में आयेंगी तब ब्याह की पक्की बातचीत करेंगी। बिल्लेसुर पैर छूकर विदा हुए।

१३

त्रिलोचन दूसरे दिन आये, और कहा, "बिल्लेसुर, तैयार हो जाओ।"

बिल्लेसुर ने कहा, "मैं तो पहले से तैयार हो चुका हूँ।"

त्रिलोचन ख़ुश होकर बोले, "तो अच्छी बात है, चलो।"

बिल्लेसुर ने कहा, "भय्या, मन्नी की मौसिया सास की भतीजी की ससुराल में एक लड़की है, कल आये थे, बातचीत पक्की कर गये हैं, अब तो मुझे माफ़ी दीजिये।"

त्रिलोचन नाराज होकर बोले, "तो वह ब्याह ज़रूर गैतल होगा। वैसी ही लड़की होगी। हम शर्त बदकर कह सकते हैं।" मुस्कराकर बिल्लेसुर ने जवाब दिया, "और तुम्हारा दूध का धोया है? मन्नी की मौसिया सास की भतीजी की ससुराल की लड़की में दाग़ है, और तुम्हारी में, जिसके न बाप का

पता, न माँ का, न गाँव का, न सम्बन्ध का, मख़मल का झब्बा लगा है ?"

"देखो, फिर पीछे पछताओगे ।" त्रिलोचन बढ़कर बोले ।

"पछताने का काम ही नहीं करते; बहुत समझकर चलते हैं, त्रिलोचन भय्या ।" बिल्लेसुर ने कड़ाई से जवाब दिया ।

"अच्छा, चलकर ज़रा लड़की तो देख लो—तुम्हें लड़की भी दिखा देंगे ।"

"अब, लड़की नहीं, लड़की की आजी तक को दिखाओ तो भी मैं नहीं जाऊँगा । जब घर में, अपने नातेदारों में लड़की है तब दूसरी जगह नहीं जाना चाहिए । यह तो धर्म छोड़ना है । गृहस्थ की लड़की का रूप नहीं देखा जाता, गुण देखा जाता है । कहते हैं, रूपवती लड़की बदचलन होती है ।"

"तो यह तेरे लिये सावित्री आ रही है । देख ले, अगर गाँव के धिंगरों से पीछा छूटे ।"

"यह सब हमें मालूम है । लेकिन घर का सामान लेकर भाग न जायगी, देख लेना । जो मुसीबत पड़ेगी, झेलेगी । किसी का धर्म बिगाड़ने से नहीं बिगड़ता । गाँव में सब का हाल हमें मालूम है ।"

"तू सबको दोष लगा रहा है।"

"मैं किसी को दोष नहीं लगा रहा, सच-सच कह रहा हूँ।"

"अच्छा बता, हमें क्या दोष लगा है, नहीं तो—"

"तुम चले जाओ यहाँ से, नहीं तो मैं चौकीदार के पास जाता हूँ।"

चौकीदार के नाम से त्रिलोचन चले। करुणा भरे क्रोध से घूम-घूमकर देखते जाते थे।

बिल्लेसुर अपना काम करने निकले।

१४

कातिक लगते मन्नी की सास आई। कुछ भटकना पड़ा। पूछते-पूछते मकान मालूम कर लिया। बिल्लेसुर ने देखा, लपककर पैर छुए। मकान के भीतर ले गये। खटोला डाल दिया। उस पर एक टाट बिछाकर कहा, "अम्मा, बैठो।" खटोले पर बैठते हुए मन्नी की सास ने कहा, "और तुम खड़े रहोगे?" बिल्लेसुर ने कहा, "लड़कों को खड़ा ही रहना चाहिये। आपकी

बेटी हैं तो क्या? जैसे बेटी, वैसे बेटा। मुझसे वे बड़ी ही हैं। आप तो फिर धर्म की माँ हैं। पैदा करनेवाली तो पाप की माँ कहलाती है। तुम बैठो, मैं अभी छन भर में आया।"

बिल्लेसुर गाँव के बनिये के यहाँ गये। पावभर शकर ली। लौटकर बकरी के दूध में शकर मिलाकर लोटा भरकर खटोले के सिरहाने रक्खा। गिलास में पानी लेकर कहा, "लो अम्मा, कुल्ला कर डालो। हाथ-पैर धोने हों तो डोल में पानी रक्खा है, बैठे-बैठे गिलास से लेकर धो डालो।" कहकर दूधवाला लोटा उठा लिया। मन्नी की सास ने हाथ-पैर धोये बिल्लेसुर लोटे से दूध डालने लगे, मन्नी की सास पीने लगीं। पीकर कहा, "बच्चा, मैं बकरी का दूध ही पीती हूँ। इससे बड़ा फ़ायदा है, कुल रोगों की जड़ मर जाती है।"

शाम हो रही थी। आसमान साफ़ था। इमली के पेड़ पर चिड़ियाँ चहक रही थीं। बिल्लेसुर ने आसमान की ओर देखा, और कहा, "अभी समय है। अम्मा, तुम बैठो। मैं अभी आता हूँ। बकरियों को देखे रहना, नहीं, भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लो। आकर खोलवा लूँगा। यहाँ अम्मा, बकरियों के चोर बड़े लागन हैं।" बिल्लेसुर बाहर निकले। मन्नी की सास ने दरवाज़ा बन्द कर लिया।

सीधे खेत-खेत होकर रामगुलाम काछी की बाड़ी में

पहुँचे। तब तक रामगुलाम बाड़ी में थे। बिल्लेसुर ने पूछा, "क्या है?" रामगुलाम ने कहा, "भाँटे हैं, करेले हैं, क्या चाहिये?" बिल्लेसुर ने कहा, "सेर भर भाँटा दे दो। मुलायम-मुलायम देना।" रामगुलाम भाँटे उतारने लगा। बिल्लेसुर खड़े-खड़े बैंगन के पेड़ों की हरियाली देखते रहे। एक-एक पेड़ ऐंठा खड़ा कह रहा था, "दुनिया में हम अपना सानी नहीं रखते।" रामगुलाम ने भाँटे उतारकर, तोलकर, मालवाला पलड़ा काफ़ी झुका दिखाते हुए, बिल्लेसुर के अँगोछे में डाल दिये। बिल्लेसुर ने पहले अँगोछे में गाँठ मारी, फिर टेंट से एक पैसा निकालकर हाथ बढ़ाये खड़े हुए रामगुलाम को दिया। रामगुलाम ने कहा, "एक और लाओ।" बिल्लेसुर मुस्कराकर बोले, "क्या गाँववालों से भी बाज़ार का भाव लोगे?" रामगुलाम ने कहा, "कौन रोज अँगोछा बढ़ाये रहते हो? आज मन चला होगा या कोई नातेदार आया होगा।" बिल्लेसुर ने कहा, "अच्छी बात है, कल ले लेना। इस वक्त नहीं है।" बिल्लेसुर की तरकारी खाने की इच्छा होती थी तो चने भिगो देते थे, फिर तेल मसाले में तलकर रसेदार बना लेते थे। लौटते हुए मुरली कहार से कहा, "कल पहर भर दिन चढ़ते हमें दो सेर सिंघाड़े दे जाना।" फिर घर आकर दरवाज़ा खोलवाया। दीया जलाकर बकरियों को दुहा। सबेरे की काटी

पत्तियाँ डालीं और रसोई में रोटी बनाने गये। रोटी, दाल, भात, बैगन की भाजी, आम का अचार, बकरी का गर्म दूध और शकर परोसकर पाटा डालकर पानी रखकर सास जी से कहा, "अम्मा, चलो, भोजन कर लो।" मन्नी की सास शरमाई हुई उठीं; हाथ-पैर धोकर चौके में जाकर प्रेम से भोजन करने लगीं। खाते-खाते पूछा, "भैंस तो तुम्हारे है नहीं, लेकिन घी भैंस का पड़ा जान पड़ता है।" बिल्लेसुर ने कहा, "गृहस्थी में भैंस का घी रखना ही पड़ता है, कोई आया-गया, अपने काम में बकरी का घी ही लाता हूँ।" मन्नी की सास ने छककर भोजन किया, हाथ-मुँह धोकर खटोले पर बैठीं। बिल्लेसुर ने इलायची, मसाले से निकालकर दी। फिर स्वयं भोजन करने गये। बहुत दिनों बाद तृप्ति से भोजन करके पड़ोस से एक चारपाई माँग लाये; डालकर, खटोले का टाट उठाकर अपनी चारपाई पर डाला और मन्नी की सास के लिये बंगाल से लाई रंगीन दरी बिछा दी, वहीं का गुरुआइन की पुरानी धोतियों का लपेटकर सीया तकिया लगा दिया। सास जी लेटीं। आँखें मूदकर बिल्लेसुर की बकरियों की बात सोचने लगीं। जब बिल्लेसुर काछी के यहाँ गये थे, उन्होंने एक-एक बकरी को अच्छी तरह देखा था। गिनकर आश्चर्य प्रकट किया था। इतनी बकरियाँ और बच्चों से तीन भैंस पालने के इतना मुनाफ़ा हो सकता है, कुछ ज़्यादा ही होगा।

बिल्लेसुर धैर्य के प्रतीक थे। मन में उठने पर भी उन्होंने विवाह की बातचीत के लिये कोई इशारा भी नहीं किया। सोचा, "आज थकी हैं, आराम कर लें, कल अपने आप बातचीत छेड़ेंगी, नहीं तो यहाँ सिर्फ़ मुँह दिखाने थोड़े ही आई हैं?"

बिल्लेसुर पड़े थे। एकाएक सुना, खटोले से सिसकियाँ आ रही हैं। साँस रोककर पड़े सुनते रहे। सिसकियाँ धीरे-धीरे गूँजने लगीं, फिर रोने की साफ़ आवाज़ उठने लगी। बिल्लेसुर के देवता कूच कर गये कि खा-पीकर यह कारन करके रोना कैसा? जी धक से हुआ कि विवाह नहीं लगा, इसकी यह अग्रसूचना है। घबरा कर पूछा, "क्यों अम्मा, रोती क्यों हो?" मन्नी की सास ने रोते हुए कहा, "न जाने किस देश में मेरी बिटिया को ले गये! जब से गये, एक चिट्ठी भी न दी।"

बिल्लेसुर ने समझाया, "अम्मा, रोओ नहीं। भाभी बड़े मज़े में हैं। मन्नी भय्या उनकी बड़ी सेवा करते हैं। मैं जहाँ गया था, मन्नी वहाँ से दूर हैं। हाल मिलते थे। लोग कहते थे, अच्छी नौकरी लग गई है। उनका सारा मन भाभी पर लगा है। अब भाभी उतनी ही बड़ी नही हैं। लोग कहते थे, बिल्लेसुर, अब दो-तीन साल में तुम्हारे भतीजा होगा।

"राम करे, सुख से रहें। हमको तो धोखा दे गये बच्चे! हमारे और कौन था? जिस तरह दिन कटते हैं, हमारी आत्मा

जानती है।" कहकर मन्नी की सास ने अघाकर साँस छोड़ी।

बिल्लेसुर ने कहा, "जैसे मन्नी, वैसे मैं। तुम यहाँ रहो। खाने की यहाँ कोई तकलीफ़ नहीं। मुझे भी बनी बनाई दो रोटियाँ मिल जायँगी।

मन्नी की सास बहुत प्रसन्न हुईं। कहा, "बच्चा, फूलो-फलो, तुम्हारा तो आसरा ही है। अब के आई हैं तो कुछ दिन रहकर जाऊँगी। तुम्हारा काम-काज यहाँ का देख लूँ।" ब्याह एक लगा है, हो गया तो उसे तुम्हारी गृहस्थी समझा दूँ।

"इससे अच्छी बात और क्या होगी?" बिल्लेसुर पौरुष में जगकर बोले।

मन्नी की सास ने कहा, "बच्चा, अब तक नहीं कहा था, सोचा था, जब काम से छुट्टी पा जाओगे, तब कहूँगी। ब्याह एक ठीक है। लड़की तुम्हारे लायक़, सयानी है। लेकिन हमारी बिटिया की तरह गोरी नहीं। भलेमानुस है। घर का कामकाज सँभाल लेगी। बताओ, राज़ी हो?"

बिल्लेसुर भक्तिभाव से बोले, "आप जानें। आप राज़ी हैं तो मैं भी हूँ।"

मन्नी की सास प्रसन्न हुईं, कहा, "ठीक है। कर लो। उसको भी तुम्हारे साथ तकलीफ़ न होगी। थोड़ी-सी मदद उसकी माँ की तुम्हें करती रहनी पड़ेगी। ब्याह से पहले, बहुत नहीं, तीस रुपये दे दो! ग़रीब है, क़र्ज़दार है। फिर कुछ-

कुछ देते रहना। उसके भी और कोई नहीं। मैं लड़की को तुम्हारे यहाँ ले आऊँगी। यहीं विवाह कर लो। बारात उसके यहाँ ले जाओगे तो कुल खर्चा देना पड़ेगा, इसमें ज़्यादा खर्चा बैठेगा। घर में अपने चार नातेदार बुलाकर ब्याह कर लोगे, भले-भले पार लग जाओगे।"

बिल्लेसुर को मालूम दिया, इस ज़बान में छल नहीं, कहा, "हाँ, बड़ी नेक सलाह है।"

मन्नी की सास कई रोज़ रहीं। बिल्लेसुर को बना-बनाया खाने को मिला। तीन-चार दिन में रंग बदल गया। उन्होंने आग्रह किया कि ब्याह तक वे वहीं रहें। मन्नी की सास ने भी स्वीकार कर लिया।

गाँव में बिल्लेसुर की चर्चा ने ज़ोर मारा। एक दिन त्रिलोचन ने मन्नी की सास को घेरा और पूछा, "बताओ, ब्याह कहाँ रचा रही हो?"

"अपनी नातेदारी में" मन्नी की सास ने कहा।

"वह कहाँ है?" त्रिलोचन ने पूछा।

"क्यों, क्या बिल्लेसुर तुम्हीं हो?" मन्नी की सास ने आँखें नचाकर पूछा, फिर कहा, "बच्चे, मेरी निगाह साफ़ है, मुझे तींगुर नहीं लगता। अब तुम बताओ कि तुम बिल्लेसुर के कौन हो?"

बल्ली नहीं लगी। त्रिलोचन बहुत कटे। कहा, "अच्छी

बात है, कौन हैं, यह ब्याह होने पर बतायेंगे जब उनका पानी बन्द होगा।"

"नातेदार रिश्तेदार जिसके साथ हैं, उसका पानी परमात्मा नहीं बन्द कर सकते। अच्छा, हमारे घर से बाहर निकलो और गाँव में पानी बन्द करो चलकर।" त्रिलोचन खिसियाये हुये घर से बाहर निकल गये।

बड़े आनन्द से दिन कट रहे थे। बिल्लेसुर की शकरकन्द खूब बैठी थी। कई रोज़ उन्होंने मन्नी की सास को शकरकन्द भूनकर बकरी के दूध में खिलाया। मन्नी की सास मन्नी से जितना अप्रसन्न थीं, बिल्लेसुर से उतना ही प्रसन्न हुईं। उन्होंने बिल्लेसुर के उजड़े बाग़ का एक-एक पेड़, शकरकन्द के खेत की एक-एक लता देखी। उनके आ जाने से ताकने के लिये बिल्लेसुर रात को शकरकन्द के खेत में रहने लगे। दो-एक दिन जंगली सुअर लगे; दो-तीन दिन कुछ-कुछ चोर खोद ले गये। अभी बौंड़ी पीली नहीं पड़ी थी। नुक़सान होता देखकर मन्नी की सास ने कुल शकरकन्द खोद लाने की सलाह दी। बिल्लेसुर ने वैसा ही किया। उन्होंने घर में ढेर लगाकर देखा, इतनी शकरकन्द हुई है कि सारा घर भर गया है। एकाएक शकरकन्द जैसे लोढ़ा, मन्नी की सास ने मुस्कराते हुए कहा, "इससे तुम्हारा ब्याह भी हो जायगा और काफी शकरकन्द भी खाने को बच रहेगी।" शकरकन्दों को

विश्वास की दृष्टि से देखते हुए बिल्लेसुर ने कहा, "अम्मा, सब तुम्हारा आसिरबाद, नहीं तो मैं किस लायक हूँ ?" सास ने साँस छोड़कर कहा, "मेरा बच्चा जीता होता तो अब तक तुम्हारे इतना हुआ होता। खेती-किसानी करता; मैं मारी-मारी न फिरती।" बिल्लेसुर ने उन्हें धीरज दिया, कहा, "हमी तुम्हारे लड़के हैं। तुम कैसी भी चिन्ता न करो, मेरी जब तक साँस चलती है, मैं तुम्हारी सेवा करूँगा। जी न छोटा करो।" सास ने आँचल से आँसू पोंछे। बिल्लेसुर दूसरे गाँव की तरफ़ शकरकन्दों का ख़रीदार लगाने चले। सोचा, बकरियों के लिये, लौटकर पत्ते काटूँगा। दूसरे दिन ख़रीदार आया और ७०) की बिल्लेसुर ने शकरकन्द बेची। सारे गाँव में तहलका मच गया। लोग सिहाने लगे। अगले साल सबने शकरकन्द लगाने की ठानी।

कातिक की चाँदनी छिटक रही थी। गुलाबी जाड़ा पड़ रहा था। सवन-जाति की चिड़ियाँ कहीं से उड़कर जाड़े भर इमली की फुनगी पर बसेरा लेने लगी थीं; उनका कलरव उठ रहा था। बिल्लेसुर रात को चबूतरे की बुर्जी पर बैठे

देखते थे, पहले शाम को आसमान में हिरनी-हिरन जहाँ दिखते थे, अब वहाँ नहीं हैं। बिल्लेसुर कहते थे, जब जहाँ चरने को चारा होता है, ये चले जाते हैं। शाम से ओस पड़ने लगी थी, इसलिये देर तक बाहर का बैठना बन्द होता जा रहा था। लोग जल्द-जल्द खा-पीकर लेट रहते थे। बिल्लेसुर घर आये। मन्नी की सास ने रोज़ की तरह रोटी तैयार कर रक्खी थी। इधर बिल्लेसुर कुछ दिनों से मन्नी की सास की पकाई रोटी खाते हुए चिकने हो चले थे। पैर धोकर चौके के भीतर गये। मन्नी की सास ने परोसकर थाली बढ़ा दी। सास को देखाने के लिये बिल्लेसुर रोज़ अगरासन निकालते थे। भोजन करके उठते वक्त हाथ में ले लेते थे और रखकर हाथ-मुँह धोकर कुल्ले करके बकरी के बच्चे को खिला देते थे। अगरासन निकालने से पहले लोटे से पानी लेकर तीन दफ़े थाली के बाहर से चुवाते हुए घुमाते थे। अगरासन निकाल-कर टुनकियाँ देते हुए लोटा बजाते थे और आँखें बन्द कर लेते थे। वह कृत्य आज भी किया।

जब भोजन करने लगे तब सास जी बड़ी दीनता से खीसें काढ़कर बोलीं, "बचा, अब अगहन लगनेवाला है, कहो तो अब चलूँ।" फिर खाँसकर बोलीं, "वह काम भी तो अपना ही है।"

कौर निगलकर गम्भीर होते हुए, मोटे गले से बिल्लेसुर ने कहा, "हाँ वह काम तो देखना ही है।"

"वही कह रही थी," कुछ आगे खिसककर सासजी ने कहा, "कुछ रुपये अभी दे दो, कुछ बाद को, ब्याह के दो-तीन रोज़ पहले दे देना।"

रुपये के नाम से बिल्लेसुर कुनमुनाये। लेकिन बिना रुपये दिये ब्याह न होगा, यह समझते हुए एक पख लगाकर ब्याह पक्का करने लगे। कहा, "अभी तो अम्मा, किसी पण्डित से बिचरवाया भी नहीं गया, न बने, तो ?"

"बच्चे की बात" पूरे विश्वास से सर उठाकर मन्नी की सास ने कहा, "उसमें जब कोई दोख नहीं है तब ब्याह बनेगा कैसे नहीं ? बच्चे, वह पूरी गऊ है। और उसका ब्याह ? वह अब तक होने को रहता ? रामखेलावन आये, परदेश से, उल्टे पाँव लौट जाना चाहते थे, हाथ जोड़ने लगे,—चाची, ब्याह करा दो, जितना रुपया कहो, देंगे। अच्छा भाई, लड़की की अम्मा को मनाकर कुण्डली लेकर बिचरवाने गये, फट से बन गया। लड़की की अम्मा को तीन सौ नगद दे रहे थे। पर सिस्टा की बात; लड़की की अम्मा ने कहा, मेरी बिटिया को परदेश ले जायँगे, फिर कभी इधर झाँकेंगे नहीं; बिमारी-अरामी बूँद भर पानी को तरसूँगी; रुपये लेकर मैं क्या करूँगी ? बना-बनाया ब्याह उखड़ गया। फिर चुकन्दर-पुर के जिमींदार रामनेवाज आये। उनसे भी ब्याह बन गया। जब फलदान चढ़ने का दिन आया तब लड़की की अम्मा को

उनके गाँव के किसी पट्टीदार ने भड़काया कि रामनेवाज अपने बाप का है ही नहीं, बस ब्याह रुक गया। कितने ब्याह आये सब बन गये, लेकिन कोई न हो पाया।"

बिल्लेसुर को निश्चय हो गया कि लड़की के खून में कोई खराबी नहीं। उन्होंने सन्तोष की साँस छोड़ी। मन्नी की सास का भावावेश तब तक मन्द न पड़ा था, बङ्गालिन की तरह चटककर बोलीं, "अब तुमसे कहती हूँ, हमारे अपने हो, सैकड़ों सच्ची-झूठी बातें न गढ़ती तो वह राँड़ तुम्हारे लिये राज़ी न होती।"

बिगड़कर बिल्लेसुर बोले, "तुम तो कहती थीं, बड़ी भलेमानुस है?"

"कहने के लिये, बच्चा ए. भलेमानुस सबको कहते हैं; लेकिन, कैसा भी भलामानुस हो, अपनी चित कौड़ी को पट होते देखता है? फिर वह दस बिस्वेवाली तुम्हारे यहाँ कैसे लड़की ब्याह देती? उसको समझाया कि दुरगादास के सुकुल हैं, परदेश कमा के आये हैं, कहो कि एक साथ गिन दें तो ऐसा न होगा; धीरे-धीरे देंगे। आखिर कहाँ जाती, मान गई। तुमसे इसीलिये कहा, ३०) ब्याह से पहले दो, फिर धीरे-धीरे मदद करते रहो।" सासजी टकटकी बाँधे बिल्लेसुर को देखती रहीं। इतने कम पर राज़ी न होना मूर्खता है समझकर बिल्लेसुर ने कहा, "अच्छा, कल कुण्डली और एक रुपया

लेकर चलो, तीन-चार दिन में मैं पण्डित से आकर पूछूँगा कि कैसा बनता है।"

"एक दफ़े नहीं, बच्चा, दस दफ़े। लेकिन जब आना तब पन्द्रह रुपये लेते आना कम-से-कम।"

गम्भीर होकर बिल्लेसुर उठे और हाथ-मुँह धोने लगे। मन को समझाती हुई सासजी भोजन करने बैठीं। भोजन के बाद दोनों लेटे और अपनी-अपनी गुत्थी सुलझाते रहे। किसी ने किसी से बातचीत न की। फिर कब सो गये। पौ फटने से पहले जब आकाश में तारे थे, मन्नी की सास जगीं और बिल्लेसुर को जगाने के इरादे से ऊँचे स्वर से राम-राम जपने लगीं।

बिल्लेसुर उठकर बैठे और आँखें मलकर, स्नेह सूचित करते हुए पूछा, "अम्मा, क्या सबेरे-सबेरे निकल जाने का इरादा है?"

मन्नी की सास ने आँखों में आँसू भरे। कहा, "बच्चा, अब देर करना ठीक नहीं। पिछलें पहर चलूँगी तो रात होगी, काम न होगा।"

बिल्लेसुर ने अँधेरे में टटोलकर सन्दूक़ में रक्खी कुण्डली निकाली और सासजी को देते हुए कहा, "देखियेगा, कहीं खो न जाय।"

"नहीं, बच्चा, खो क्या जायगी?" कहकर सासजी ने आग्रह से कुण्डली ली। बिल्लेसुर ने टेंट से एक रुपया निकाला; सासजी के हाथ में रखकर पैर छुए; कहा, "यह तुम्हें कुछ दे

नहीं रहा हूँ ।"

"क्या मैं कुछ कहती हूँ, बच्चा ?" असन्तोष को दबाकर मन्नी की सास घर के बाहर निकलीं। रास्ते पर आकर एक साँस छोड़ी और अपने गाँव का रास्ता पकड़ा। अब तक सबेरा हो चुका था।

बिल्लेसुर ने इधर बड़ा काम किया। शकरकन्द वाले खेत में मटर बो दिये। उधरवाले में चने बो चुके थे, जो अब तक बढ़ आये थे।

काम करते हुए रह-रहकर बिल्लेसुर को सास की याद आती रही; विवाह की बेल जैसे कलियाँ लेने लगी; काम करते-करते दुचित्ते होने लगे; साँस रुक-रुक जाने लगी, रोएँ खड़े होने लगे।

आख़िर चलने का दिन आया। बिल्लेसुर दूध दुहकर, एक हण्डी में मुस्का बाँधकर, दूध लेकर चलने के लिये तैयार हुए। रात के काटे पत्ते रक्खे थे, बकरियों के आगे डाल दिये। फिर पानी भरकर घर में स्नान किया। थोड़ी देर पूजा की। रोज़ पूजा करते रहे हों, यह बात नहीं। पूजा करते

समय दरपन कई बार देखा, आँखें और भौंहें चढ़ाकर-उतार-कर, गाल फुलाकर-पिचकाकर, होंठ फैलाकर-चढ़ाकर। चन्दन लगाकर एक दफ़ा फिर मुँह देखा। आँखें निकालकर देर तक देखते रहे कि चेचक के दाग़ कितने साफ़ दिखते हैं। फिर कुछ देर तक अशुद्ध गायत्री का जप करते रहे मन में यह निश्चय लिये हुए कि काम पूरा हो जायगा। फिर पुजापा समेट-कर भीतर के एक ताक़ पर रखकर बासी रोटियाँ निकालीं। भोजन करके हाथ-मुँह धोया, कपड़े पहनने लगे। मोज़े के नीचे तक उतारकर धोती पहनी, फिर कुर्ता पहनकर चारपाई पर बैठे, साफ़ा बाँधने लगे। बाँधकर एक दफ़े फिर उसी तरह दरपन देखा और तरह-तरह की मुद्राएँ बनाते रहे। फिर जेब में वह छोटा-सा दरपन और गले में मैला अँगोछा और धुस्सा डालकर लाठी उठाई। जूते पहले से तेलवाये रक्खे थे, पहन लिये। दरवाज़े निकलकर मकान में ताला लगाया, और दोनों नथनों में कौन चल रहा है, दबाकर देखकर, उसी जगह दायाँ पैर तीन दफ़े दे दे मारा, और दूधवाली हण्डी उठाकर निगाह नीची किये गम्भीरता से चले।

थोड़ी दूर पर भरा घड़ा मिला। बिल्लेसुर ख़ुश हो गये। घड़ेवाली सगुन की सोचकर मुस्कराई, कहा, "मेरी मिठाई कब ले आते हो?" काम निकलने के बादवाले आशय से सिर हिलाकर आश्वासन देते हुये बिल्लेसुर आगे बढ़े।

नाला मिला। किनारे रियें और बबूल के पेड़। ख़ुश्की पकड़े चले जा रहे थे। बनियों के ताल के किनारे से गुज़रे। देखकर कुछ बगले इस किनारे से उस किनारे उड़ गये। बिल्लेसुर बढ़ते गये। शमशेर-गंज का बैरहना मिला। एक जगह कुछ खजूर और ताड़ के पेड़ दिखे। सामने खेत, हरियाली लहराती हुई। ओस पर सूरज की किरनें पड़ रही थीं। आँखों पर तरह-तरह का रङ्ग चढ़-उतर रहा था। दिल में गुदगुदी पैदा हो रही थी। पैर तेज़ उठ रहे थे। मालूम भी न हुआ कि हाथ में दूध से भरी भारी हण्डी है।

आम और महुए की कतारें कच्ची सड़क के किनारे पड़ीं। जाड़े की सुहावनी सुनहली धूप छनकर आ रही थी। सारी दुनिया सोने की मालूम दी। ग़रीबीवाला रंग उड़ गया। छोटे-बड़े हर पेड़ पर बड़ा मौसिम का असर उनमें भी आ गया। अनुकूल हवा से तने पाल की तरह अपने लक्ष्य पर चलते गए। इस व्यवसाय में उन्हें फ़ायदा-ही-फ़ायदा है, निश्चय बँधा रहा है। चारों ओर हरियाली। जितनी दूर निगाह जाती थी, हवा से लहराती हरी तरङ्गें ही दिखती थीं; उनके साथ दिल मिल जाता और उन्हीं की तरह लहराने लगता था।

आशा की सफलता-जैसे, खेत और बग़ीचों के भीतर से गाँव की दीवारें दिखने लगीं। बिल्लेसुर उतावली से बढ़ते गये। गलियारे-गलियारे गाँव के भीतर पहुँचे। कुयें की जगत के

किनारे नहाने के लिये बनी पक्की चौकी पर बैठे एक वृद्ध सूर्य की ओर मुँह किये काँपते हुये माला जप रहे थे। कुछ आगे बढ़ने पर बढ़इयों का मकान मिला। गाड़ी के पहिये बनने की ठक-ठक दूर तक गूँज रही थी। कुछ आगे दर्ज़ी की दूकान मिली। वहाँ बहुत-से लोग इकट्ठे दिखे। तरह-तरह के रङ्गीन कपड़े सिलने को आये फैले हुए। दर्ज़ी सिर गड़ाये तत्परता से मशीन चलाता हुआ। एक लड़का चौपाल की दूसरी तरफ़ बैठा भरी रज़ाई में टाँके लगाता हुआ। दो आदमी नये कपड़े काटते और मशीन पर चढ़ाने के लिये टाँकते हुए। लोग ग़ौर से रङ्गों की बहार देखते लाठी के सहारे खड़े ग़प लड़ाते तम्बाकू थूकते हुए। बिल्लेसुर तद्‌गतेन मनसा सासजी के मकान की ओर बढ़े चले गये। एक कोलिया के भीतर सासजी का अधगिरा मकान था। दरवाज़े खुले थे। आवाज़ देते हुये भीतर चले गये। सासजी इन्तज़ार कर रही थीं। देखकर मुस्कराती हुई उठीं। नजर हण्डी पर थी। बिल्लेसुर ने गर्व से हण्डी रख दी और सासजी के पैर छुये। सासजी ने कुशल पूछी जैसे एक मुद्दत के बाद मुलाक़ात हुई हो; फिर बिछी चारपाई पर ले चलकर बैठाला और ग़ौर से बिल्लेसुर की ब्याहवाली उतावली को आँख देखती रहीं।

कुछ देर तक बिल्लेसुर बैठे गम्भीर होते रहे; फिर आवाज़ में भारीपन लाकर भले गृहस्थ की तरह पूछा, "ब्याह विचरवा तो लिया गया होगा ?"

सासजी के समन्दर पर जैसे तूफ़ान आ गया। उद्वेल होकर तारीफ़ करने लगीं; किस तरह पण्डित के यहाँ गईं,—पण्डित ने बिचारा,—आँखें चढ़ाकर कहा,—"साक्षात् लक्ष्मी है, घर पर पैर रखते ही घर भर देगी,"—विवाह बहुत बनता है, लड़की वैश्य वर्ण है और देव गण,—बिल्लेसुर से कोई बैर नहीं पड़ता। साथ ही यह भी कहा कि कुल में ऊँचे हैं, इसलिये बिल्लेसुर यहाँ अपने को छुंगे के नहीं तो दुर्गादासवाले ज़रूर कहें, नहीं तो उनकी तौहीन होगी।

बिल्लेसुर की बाछें खिल गईं। विनम्र भाव से कहा, माँ-बाप का कहना सभी मानते हैं, जैसी आज्ञा होगी कहने में मुझे ऐतराज़ न होगा।

सासजी ने तृप्ति की साँस छोड़ी। फिर बिल्लेसुर के पास एक पण्डित बुला लाईं। पंडित ने शीघ्रबोध के अनुसार बनते हुए ब्याह की प्रशंसा की। बिल्लेसुर श्रद्धापूर्वक मान गये। अगली लगन में ब्याह होना निश्चित हो गया, और सासजी की आज्ञा के अनुसार उन्हीं के यहाँ से ब्याह होने की बात तै रही। शाम को एक लड़की ले आई गई और दीये के उजाले में बिल्लेसुर ने उसे देखा। उन्हें विश्वास हो गया कि कहीं कोई कलङ्क नहीं। हाथ-पैर के अलावा उन्होंने उसका मुँह नहीं देखा। उसकी अम्मा से देर तक बात-चीत करते रहे। उन्हें ढाढस देकर गाँव की राह ली। रुपये मन्नी की सास को दे आये।

१७

बिल्लेसुर गाँव आये जैसे कोई क़िला तोड़ लिया हो। गरदन उठाये घूमने लगे। पहले लोगों ने सोचा, शकरकन्दवाली मोटाई है; बाद को राज़ खुला। त्रिलोचन दाँत-काटी-रोटी-वाले मित्र से मिले। वहाँ मालूम हुआ कि वह वही लड़की है जिससे वह गाँठ जोड़ना चाहते थे। गाँव के रँडुओं और बिल्लेसुर से ज़्यादा उम्रवाले क्वाँरों पर ब्याह का जैसे पाला पड़ा। त्रिलोचन ने बिल्लेसुर के ख़िलाफ़ जली-कटी सुनाते हुए गरमी पहुँचाई; कहा, "ब्राह्मण है!—बाप का पता नहीं। किसी भलेमानुस को पानी पिलाने लायक़ न रहेगा।" लोगों को दिलजमई हुई।

गाँव के बाजदार डोम और परजा बिल्लेसुर को आ-आकर घेरने लगे ख़ुशामद की चार बातें सुनाते हुए कि घर की सूरत बदली, चिराग़ रौशन हुआ, साल भर में बाप-दादे का नाम भी जग जायगा, पहले सूने दरवाजे से साँस लेकर निकल जाते थे, अब अड़े रहेंगे, कुछ लेकर टलेंगे। बिल्लेसुर को ऐसी गुदगुदी होती थी कि झुर्रियों में मुस्करा देते थे। सोचते थे, परजे नाक के बाल बन गये। पतले हाल की परवा न कर चढ़कर ब्याह करने की ठानी; लोग-हँसाई से डरे। परजे

ऐसा मौक़ा छोड़कर, कहाँ जायँगे, सोचा, इन्हें कुछ लिया-दिया न गया तो रास्ता चलना दूभर कर देंगे, बाप-दादों से बँधी मेड़ कट जायगी। भरोसा हुआ कि ब्याह का ख़र्च निबाह लेंगे।

नाई रोज़ तेल लगाने और बाल बनाने को पूछने लगा। कहार एक रोज़ अपने आप आकर दो घड़े पानी भर गया। बेहना बत्ती बनाने के लिये रुई की चार पिंडियाँ दे गया। चमार आकर पूछ गया, ब्याह के जोड़े नरी के बनाये या मामूली। चौकीदार पासी रोज़ आधीरात को हाँक लगाता हुआ समझा जाने लगा कि पूरी रखवाली कर रहा है। गङ्गा-वासी एक दिन दो जोड़े जनेऊ दे गया। एक दिन भट्टजी आये और सीता स्वयम्बर के कुछ कवित्त और भूषण की अमृत ध्वनि सुना गये। ग़र्ज़ यह कि इस समय कोई नहीं चूका।

बिल्लेसुर का पासा पड़ा। ज़मीन्दार ने उनकी देहली पर पैर रक्खा। सारा गाँव टूट पड़ा। ज़मीन्दार गये थे, ब्याह हो रहा है, कम-से-कम दो रुपये बिल्लेसुर नज़र देंगे, फिर मदद के लिए पूछेंगे, कुछ इस तरह वसूल हो जायगा जैसे कानपुर से आटा-शकर मँगवायेंगे तो बैल-गाड़ी के किराये के अलावा कुछ काट-कपट करा ही ली जा सकेगी। त्रिलोचन भी ज़मी-न्दार के साथ थे, सोचा था, उनके पीछे पूरी ताक़त ख़र्चकर देंगे; कुछ हाथ लग ही जायगा। त्रिलोचन को देखकर बिल्लेसुर ने निगाह बदली। जब भी त्रिलोचन तथा दूसरों ने ज़मीन्दार के समन्दर पर बरसने के लिये बिल्लेसुर को बहुत समझाया— "रिक्तपाणिर्न पश्येत राजानं देवतां गुरुम्," फिर भी बिल्लेसुर

अपनी जगह से हिले नहीं, ज़मीन्दार के सम्मान में, बैठे, दाँतों में तिनके-सा लिये रहे। कुछ देर बाद ज़मीन्दार मन मारकर उठ गये, त्रिलोचन पीछे लगे रहे। आगे बढ़कर अच्छी तरह कान भर दिये कि हुक्म भर की देर है। गाँव में दूसरे दिन से बिल्लेसुर की इज्ज़त चौगुनी हो गई। ज़मीन्दार के घर जाने का मतलब लोगों ने लगाया, बिल्लेसुर के हाथ कारूँ का ख़ज़ाना लगा है। तरह-तरह की मन-गढ़न्तें फैलीं। किसी ने कहा, "सोने की ईंटें उठा लाया है, किसी से बतलाता नहीं, छिपा जोगी है, दो साल में देखो, गाँव ख़रीदेगा।" किसी ने कहा, "महाराज के यहाँ से जवाहरात चुरा लाया है; लेकिन घर में नहीं रक्खे, बाहर कहीं घूरे में या पेड़ तले गाड़ दिये हैं ताकि चोरों के हाथ न लगें।" ऐसी बातचीत जितनी बढ़ी, बिल्लेसुर के सामने लोगों की आँख उतनी ही झुकती गई। दूसरे गाँव के लोग भी दरवाज़े से निकलते हुए बिल्लेसुर को पूछने लगे।

एक दिन नाई को बुलाकर बिल्लेसुर ने कहा, मन्नी की ससुराल गोवर्द्धनपुर जाओ और कह आओ, ब्याह बरात ले जाकर करेंगे। लड़की को मन्नी की सास बुला लें। उन्हीं के घर में खम गड़ेगा। बाक़ी यहाँ आकर समझ जायँ।

नाई कह आया। फिर नातेदारों के यहाँ न्योता पहुँचाने चला—एक गाँठ हल्दी, एक सुपाड़ी और तेल-मायन-ब्याह के दिन ज़बानी। जितने मान्य थे, दोनों जगहों की बिदाई की सोचकर मडलाने लगे।

बिल्लेसुर के बड़प्पन की बात के पर बढ़ चुके थे। वे अवसर नहीं चूके। दूसरे गाँव में गाड़ी माँगी। व्यवहार रक्खे

रहने के लिये मालिक ने गाड़ी दे दी। बिल्लेसुर चक्की से गेहूँ पिसा लाये। गाँव की निठल्ली बेवाओं से दाल दरा ली। मल-खान तेली को कानपुर से शकर ले आने के लिये कहा। बाक़ी कपड़ा और सामान गाँव के जुलाहे, काछी; तेली, तम्बोली, डोम और चमारों से तैयार करा लिया। घर के लिये चिन्ता थी कि बकरियों में नातेदारों की गुज़र न होगी, वह भी दूर हो गई; सामने रहनेवाली चौधरी की बेवा ने एक कोठरी अपने लिये रखकर बाक़ी घर छोड़ देने का पूरी उत्सुकता से वचन दिया—बिल्लेसुर की खुली क़िस्मत से उन्होंने भी शिर-कत की।

नातेदार आने लगे, कुल-के-कुल बिल्लेसुर के पिता के मान्य यानी रुपये लेनेवाले। चौधरी के मकान में डेरा डल-वाया गया तो चौकन्ने हुए। बकरियों का हाल मालूम कर खिंचे, फिर अलग रहने के कारण से ख़ुश होकर, बाहर-ही-बाहर बरतौनी और बिदाई लेकर कट जाने की सोचकर बाज़ी-सी मार बैठे।

अपने लिये ब्याह के कुल गहने कण्ठा, मोहनमाला, बजुल्ला, पहुँची, अँगूठी बिल्लेसुर मगनी माँग लाये। मुरली महाजन को देने में कोई ऐतराज़ नहीं हुआ। वह भी बिल्लेसुर का माहात्म्य सुन चुका था। चढ़ाव का कुल ज़ेवर बिल्लेसुर ने चोरों से ख़रीदा रुपये में नक्द दो आने क़ीमत चुकाकर। फिर साफ़ कराकर पटवे से गुहा लिये; कड़े-छड़े पायजेबें रहने दीं।

तेल के दिन डोमों के विकट वाद्य से गाँव गूँज उठा। बिल्लेसुर के अदृश्य वैभव का सब पर प्रभाव पड़ा। पड़ोस के ज़मीन्दार ठाकुर तहसील से लौटते हुए दरवाज़े से निकले।

बिल्लेसुर को देखकर प्रणाम किया। कारूँ के ख़ज़ाने की सोच-कर कहा, "लोगों की आँख देखकर हम कुल भेद मालूम कर लेते हैं। ब्याह करने जा रहे हो, हमारा घोड़ा चाहो तो ले जाओ।" बिल्लेसुर ने राज़ दबाकर कहा, "हम ग़रीब ब्राह्मण, ब्राह्मण की ही तरह जायँगे। आप हमारे राजा हैं, सब कुछ दे सकते हैं।" ठाकुर साहब यह सोचकर मुस्कराये कि खुलना नहीं चाहता, फिर प्रणाम कर बिदा हुए।

मातृ-पूजन के दूसरे दिन बरात चली। कुआँ पूजा गया। दूध बिल्लेसुर की एक चाची ने पिलाया। पैर लटकाये देर तक कुएँ की जगत पर अड़ी बैठी रहीं। पूछने पर कहा, "हम सोने की एक ईंट लेंगे।" बिल्लेसुर समझकर मुस्कराये। गाँववालों ने कहा, "बुरा नहीं कहा, आख़िर और किस दिन के लिये जोड़कर रक्खी गई हैं?" बिल्लेसुर ने कहा, "चाची, यहाँ तो निहत्था हूँ। पैर निकालो, लौटकर तुम्हें ईंट ही दूँगा।" चाची ख़ुश हो गईं। गाँववालों के मुँह पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि बिल्लेसुर के सोने की पचासों ईंटें हैं।

बरात निकली। अगवानी, द्वारचार, ब्याह, भात, छोटा-बड़ा आहार, बरतौनी, चतुर्थी, कुल अनुष्ठान पूरे किये गये। वहाँ इन्हीं का इन्तज़ाम था। मान्य कुल मिलाकर पाँच। बाक़ी कहार, बाजदार, भैय्याचार। चार दिन के बाद दूल्हन लेकर बिल्लेसुर घर लौटे। फिर अपने धनी होने का राज़ जीते-जी न खुलने दिया।

———